अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

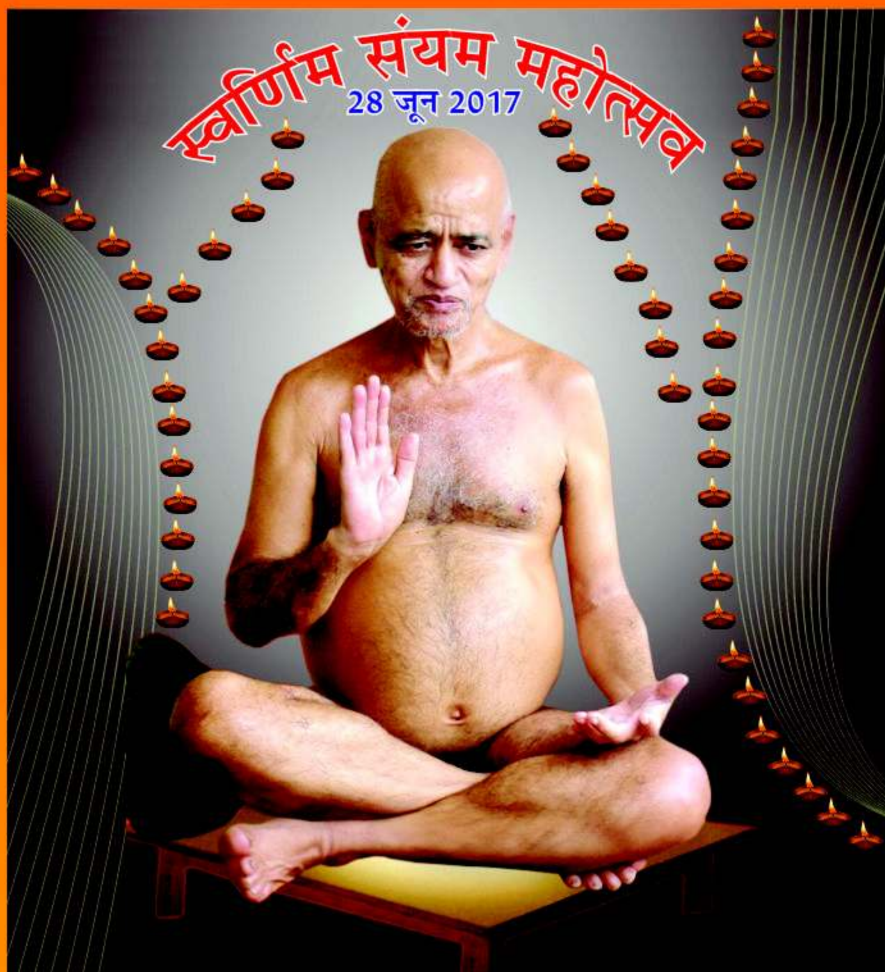

परम पूज्य संत शिरोमणि आचार्य प्रवर श्री विद्यासागरजी महाराज

संयम
कीर्ति स्तम्भ

वीर निर्वाण संवत् - 2543
अषाढ़ शुक्ल पक्ष, वि.सं. 2074, जून 2017
अंक : चालीस
वर्ष : दस

सन् 1985 में सि.क्षे. आहारजी के जिनालय से आहार को निकलते हुये क्षु.श्री आर्जवसागरजी का दुर्लभ चित्र।

सन् 1988 में सोनागिर सि. क्षेत्र में दीक्षा के समय दूसरे नम्बर पर ध्यान में लीन मुनिश्री आर्जवसागरजी का दुर्लभ चित्र।

3 अप्रैल 2017 को आचार्यश्री 108 आर्जवसागर महाराज के प्रवचन सुनते हुये दमोह जिले के कैदी।

6 अप्रैल 2017 को दमोह में सम्पन्न राष्ट्रीय युवा विद्वत संगोष्ठी में विभिन्न स्थानों से पधारे विद्वतगण।

7 अप्रैल 17 को दमोह में सम्पन्न अहिंसा एवं विज्ञान संगोष्ठी में म.प्र.शासन के वित्त मंत्री जयंत मलैया सम्मान प्राप्त करते हुए।

अहिंसा एवं विज्ञान संगोष्ठी में म.प्र. शासन के वित्त मंत्री श्री जयन्त मलैया, आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी ससंघ से आशीर्वाद प्राप्त करते हुये।

8 अप्रैल 17 को अल्पसंख्यक योजना सेमीनार दमोह में सम्मानित हाते हुये श्री अनिल जैन बड़कुल गुना।

8 अप्रैल 17 को अल्प संख्यक योजना सेमीनार में प.पू. आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज का प्रवचन।

आशीर्वाद व प्रेरणा

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज
से दीक्षित
आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक
भाव विज्ञान
(BHAV VIGYAN)

वर्ष-दस
अंक - चालीस

• परामर्शदाता •
पंडित मूलचंद लुहाड़िया
किशनगढ़ (राजस्थान) मोबा.: 9352088800

• सम्पादक •
डॉ. अजित कुमार जैन,
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003
फोन : 0755-4902433, 9425601161
bhav.vigyan@gmail.com

• प्रबंध सम्पादक •
डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक
85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा
कालोनी, भोपाल मो. 9425011357

• सम्पादक मंडल •
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), इंदौर (म.प्र.)
डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)
इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)

• कविता संकलन •
पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

• प्रकाशक •
श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा
सुल्तानाबाद, भोपाल-462003
फोन : 0755-4902433, 9425601161
email : bhav.vigyan@yahoo.co.in

• आजीवन सदस्यता शुल्क •

पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3100
आजीवन (स्थायी) सदस्यता	:	1500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक		पृष्ठ
1. सम्पादकीय	- डॉ. अजित कुमार जैन	2
2. प्रवचन प्रमेय	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	3
3. सत्पथ-दर्पण	- स्व.पं. अजित कुमार शास्त्री	14
4. दया-भाव के अभाव में आँखों का पानी सूख जाता है। योग से ज्यादा महत्वपूर्ण प्रयोग होता है।	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	20
5. कैदियों को सिखाया धर्म का पाठ	- मुनिश्री नमितसागरजी महाराज	21
6. प्राचीन भारत के शून्य और अनन्त	- स्व. प्रो. एल.सी. जैन, जबलपुर	26
7. मन की तरंगें मोक्षमार्ग में बाधक	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	29
8. पारसचन्द से बने आर्जवसागर	- आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी	30
9. धार्मिक एवं संस्कार युक्त शिक्षा वाले जैन विद्यालय की होगी स्थापना 5 से 7 एकड़ भूमि की दान	- सुनील वेजीटेरियन, प्रचार प्रभारी, दमोह	34
10. मंगलाचरण	- डॉ. अनिल चौधरी, दमोह	35
11. चेतन धन का संहार क्यो	- डॉ. रघुनन्दन चिले	35
12. कवि तो भगवान है	- इंजी. प्रेक्षा जैन, जबलपुर	35
13. समाचार		36
14. प्रश्नोत्तरी		

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

चातुर्मास से होती प्रभावना

-डॉ. अजित जैन

आत्मा के स्वभाव को धर्म कहते हैं जैसे अग्नि का स्वभाव उष्ण है, जल का स्वभाव शीतल है वैसे ही आत्मा का स्वभाव शान्ति व निराकुलता है और यही धर्म है। जैन संतों के सान्निध्य में ये दुर्लभतम क्षण प्राप्त होते हैं और हमें इन्हीं दुर्लभतम क्षणों का सदुपयोग करना आवश्यक है।

मौसम के अनुसार वर्ष में प्रमुखता से तीन ऋतुएं आती हैं शीत, ग्रीष्म एवं वर्षा। वर्षा ऋतु में जीव/जन्तुओं की उत्पत्ति बहुलता से होने पर उन जीवों की हिंसा रोकने के लिए जैन संत अनुकूल स्थान पर ठहरकर वर्षायोग अथवा चातुर्मास की स्थापना करते हैं एवं धर्म की साधना करते हैं। जहाँ पर चातुर्मास की स्थापना होती है वहाँ के भक्त पुण्यशाली होते हैं।

आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी पर चातुर्मास के आरम्भ में और दूसरे दिन गुरु पूर्णिमा पर्व, इसी दिन इन्द्रभूति गौतम के भगवान महावीर के समवशरण में आने एवं शिष्यत्व स्वीकार करने पर, मनाया जाता है तथा तीसरे दिन दिव्य ध्वनि प्रारंभ हुई अत: वीरशासन जयन्ती पर्व मनाया जाता है। चातुर्मास के इस सुयोग में श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन मोक्ष सप्तमी का पावन दिवस 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ को सम्मेदशिखर जी के स्वर्णभद्र कूट से मोक्ष की प्राप्ति हुई थी, इसलिए मनाया जाता है। पश्चात् चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज समाधि दिवस मनाने का अवसर मिलता है। मोक्ष सप्तमी के पूर्व से ही जैन संतों की प्रेरणा और उपदेश से भक्तगण 32 दिवसीय षोडसकारण पर्व के व्रत लेने के लिए मानसिकता बनाने लग जाते हैं। सोलहकारण भावनाएं उत्तम ध्यान के द्वारा कर्मबन्ध से छुड़ाते हुए आत्मा को परिमल बनाकर मुक्ति मंजिल की ओर ले जाती हैं और तीर्थंकर बनाती है। तीर्थंकर महान आत्माएं लोक कल्याण की उत्कृष्ट भावनाएँ भाती हैं एवं जगत का कल्याण करती हैं। प्राय: लोक में देखा जाता है कि इस जगत में भावना के अनुरूप ही फल की उद्भूति होती है कहावत है ''जा की रही भावना जैसी, सुख दु:ख की भरनी हो वैसी''। श्रेष्ठ या धार्मिक भावना भाने वाला प्राणी पापों से विलग हो, भव अर्थात् संसारिक परिभ्रमण से दूर हो जाता है। षोडसकारण पर्व के दौरान ही 10 दिवसीय पर्यूषण पर्व मनाया जाता है। इन विशेष पर्वों में भक्तगण प्रात: सामूहिक पूजन, मुनिश्री द्वारा पर्व विशेष पर प्रवचन, दोपहर में तत्त्वार्थ सूत्र का वाचन-विवेचन, सामूहिक प्रतिक्रमण, रात्रि में विद्वानों द्वारा प्रवचन के भक्तिमय कार्यक्रम आयोजित होते हैं। प्राय: संत समागम के अवसर पर पर्यूषण पर्व में श्रावक/श्राविका संस्कार शिविर भी लगाए जाते हैं। श्रावकों के द्वारा उपवास/शुद्धाहार का अपूर्व आनंद एवं पुण्यार्जन भी किया जाता है। इस दौरान भक्तों को जीवनोपयोगी बातें आत्मसात करने, मन को नियंत्रित/स्थिर करके चारित्र के विकास का अवसर मिलता है।

चातुर्मास में अनेक पर्व/महापर्व जैसे गुरुपूर्णिमा, मोक्ष सप्तमी, षोडसकारण पर्व, दसलक्षण पर्व आदि मनाने का अवसर प्राप्त होता है। इन पर्वों में पारसमणि रत्न जैसा जैन संत का सान्निध्य प्राप्त होने पर धर्म की वर्षा तो होती ही है, साथ ही साथ शंका-समाधान, ध्यान की सिद्धि, तपश्चरण करने, बेहतर संस्कार, सदाचार, नियम-संयम ग्रहण करने की विशेष प्रेरणा प्राप्त होती है। भक्तों की आपा-धापी की जीवन चर्या में जब जैन संत का समागम प्राप्त होता है तो वह जीवन शैली परिवर्तित होकर संतुष्टी एवं स्वस्थ तन, मन, वचन की उपलब्धि कराती है एवं पुण्यार्जन का फल स्वमेव मिलने लगता है। साथ ही, पूरी समाज को बेहतर एवं उद्देश्यपूर्ण जीवन शैली जीने की एक नई दिशा में बढ़ने की उपलब्धि होती है।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः

प्रवचन प्रमेय

गतांक से आगे........

-आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज

समता सर्वभूतेषु, संयमे शुभभावना।

आर्तरौद्रपरित्यागस्तद्धि सामायिकं मतं॥(सामायिकपाठ)

प्रात: काल जन्मकल्याणक महोत्सव हो चुका है। उसी के विषय में कुछ कहना चाह रहा हूँ। ''भगवान का जन्म नहीं हुआ करता, जन्म के ऊपर विजय प्राप्त करने से बनते हैं भगवान्। भगवान् का जन्म नहीं होता किन्तु जो भगवान् बनने वाले हैं उनका जन्म होता है इसी अपेक्षा से यहाँ पर जन्मकल्याणक मनाया गया। यह जन्ममहोत्सव हमारे लिये श्रेयस्कर भी होगा। क्या ''हम भी अपना जन्म महोत्सव मनाये'' इस पर भी कुछ कहना चाहूँगा। अन्य विषयों पर भी कुछ कहूँगा। तो सबसे पहले जन्म को समझें। आचार्य समन्तभद्रस्वामी जी ने रत्नकारण्ड श्रावकाचार में एक कारिका के द्वारा अठारह दोष गिनाये हैं-

क्षुत्पिपासाजरातंकजन्मान्तकभयस्मया:।

न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्त: स प्रकीर्त्यते॥

इन दोषों से रहित होना ही भगवान् का सही-सही स्वरूप है। जिन्हें हम पूज्य मानते हैं, चरणों में माथा झुकाते हैं, आदर्श होते हैं, उनके सामने घुटने स्वत: ही अवनत हो जाते हैं। यहाँ अठारह दोषों में एक जन्म भी आता है और मरण भी, किन्तु वह मरण महान पूज्य हो जाता है जिसमें फिर जन्म नहीं मिलता।

प्रात: काल बात यह कही थी कि प्रत्येक वस्तु का परिणमन करना स्वभाव है। चाहे वह जीव हो या अजीव, कोई भी हो। इतना अवश्य है कि जीव-जीव के रूप परिणमन करता है और अजीव-अजीव के रूप में। कभी भी अजीव, जीव के रूप में तथा जीव अजीव के रूप में परिणमन नहीं करता। तब भी हमारी दृष्टि में जीव का परिणमन, जीव के रूप में न आकर अजीव के रूप में आता है, जो हमारी ही दृष्टि का दोष है। आचार्यों ने तो आप्त, सच्चे देव की परीक्षा करके, का लक्षण बता दिया। इसके माध्यम से क्या होने वाला है? हमारे साध्य की सिद्धि होने वाली है। वे तो आदर्श रहेंगेऔर उनके माध्यम से हमारा भाव, हमारे भीतर उद्भूत होगा, स्वरूप की पहचान होगी। क्या कभी आपने दर्पण देखा है? दर्पण कहो, प्रतिमा कहो बात एक ही है। दर्पण को देखा है ऐसा तो कह देंगे। परन्तु वस्तुत: दर्पण देखने में आता नहीं ज्यों ही दर्पण हम हाथ में लेते हैं त्यों ही उसमें अपना मुख दिखाई देने लगता है। दर्पण नहीं दिखता और दर्पण के बिना अपना मुख भी नहीं दिखता।

भगवान् भी दर्पण के समान हैं, क्योंकि वे अठारह दोषों से रहित हैं, स्वच्छ-निर्मल हैं। उनको देखकर, ज्ञान हो जाता है कि हमारे सारे के सारे दोष अभी विद्यमान हैं। इसलिए हमारा स्वरूप यह नहीं है। स्वरूप की पहचान दो प्रकार से होती है एवं सुख की प्राप्ति भी दो प्रकार से होती है। इसी तरह ज्ञान भी दो प्रकार का होता है। एक विधि रूप और दूसरा निषेधरूप। जैसे आपने बेटे से कहा- तुम्हें यहाँ पर नहीं बैठना है तो उसे अपने आप यह ज्ञान हो जाता है कि मुझे यहाँ न बैठकर यहाँ बैठना है। यदि वहाँ के लिए भी निषेध किया जाता है तो

वह अन्यत्र प्रवृत्ति करता है। इस प्रकार से निषेध से ही विधि का ज्ञान हो जाता है। मात्र कहने का ढंग अलग-अलग है, बात तो एक ही है। इसी तरह मोक्षमार्ग में कहा जाता है कि पकड़िये अपने आपको। तब आप कहते हैं क्या पकड़े महाराज! कुछ भी दिखने में नहीं आता। कोई बात नहीं, यदि पकड़ में नहीं आता तो न पकड़िये, किन्तु जो पकड़ रखा है उसको छोड़िये'' - यह निषेध रूप कथन है। इससे निषेध करते-करते अपने आप ज्ञात हो जाता है कि यह हमारा स्वरूप है।

आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने एक स्थान पर लिखा है कि- आत्मा का स्वरूप क्या है? आत्मा का स्वभाव क्या है? आत्मा के लक्षण से हम स्वरूप को पहचान सकते हैं, स्वभाव को जान सकते हैं। तो मतलब यह हुआ कि लक्षण अलग है और स्वरूप-स्वभाव अलग। दोनों में बहुत अन्तर होता है। वर्तमान में लक्षण का संवेदन हो सकता है, होता है किन्तु स्वरूप का संवेदन नहीं होगा। उपयोग, आत्मा का लक्षण है इससे ही आत्मा को पकड़ सकते हैं। स्वरूप का श्रद्धान भी इस लक्षण के माध्यम से ही होगा। जिसकी प्राप्ति के लिए श्रद्धान किया जाता है जो उसकी प्राप्ति में साधना की भी आवश्यकता होती है। जैसे कि भगवान् बनने के लिए प्रक्रिया कल से प्रारम्भ होने वाली है। साधना के लिए ''समयसार'' में आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी जी ने लिखा है-

अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिदि‌दट्ठसंठाणं॥

जीव रूपवान् नहीं है। जीव गन्धवान् नहीं है। जीव रसवान् नहीं है। जीव स्पर्शवान् नहीं है। जीव संस्थान वाला नहीं है। जीव उपयोग वाला है। अब सोचिये- यह नहीं, यह नहीं, यह नहीं, फिर स्वभाव क्या है आत्मा का? अनिर्दिष्ट संस्थान। संस्थान आत्मा का स्वभाव नहीं है। फिर संस्थान क्यों मिला, क्या कारण है? जब संस्थानातीत है तो संस्थान क्यों मिला, जो आकार-प्रकार से रहित है उसमें आकार-प्रकार क्यों? जो रूप, रस, गन्ध, वर्णवाला नहीं है फिर भी उसे रस, रूप, गन्ध के माध्यम से पहचान सकेंगे। जैसे पण्डित जी ने अभी कहा- क्या कहा था अपने आपको? हुकुमचन्द ही तो कहा था। कहने में भी यही आयेगा अन्यथा अपना परिचय कैसे संभव है? तब मैं सोच रहा था कि पण्डित जी अपनी आत्मा के बारे में क्या परिचय देते हैं? आखिर हुकुमचन्द यही तो कहना पड़ा। शब्द के माध्यम से ही अपनी आत्मा का बोध कराया, जो कि शब्दातीत है। अर्थ यह हुआ कि पण्डित जी ने विधि परक अर्थ कभी भी नहीं बताया, बता भी नहीं सकेंगे, क्योंकि कुन्दकुन्दस्वामी खुद कह रहे हैं ''अरस'' अर्थात् रस नहीं है। तो क्या है? भगवान् ही जानें। अरस, अरूप, अगन्ध, अस्पर्श, निर्दिष्टसंस्थान नहीं है, अलिंगग्रहण रूप है। किसी बिम्ब के द्वारा, किसी साधन के द्वारा उसे पकड़ा नहीं जा सकता, फिर भी आखों के द्वारा देखने में आ रहा है, छूने में आ रहा है, संवेदन भी हो रहा है। सब कुछ हो रहा है। हाँ ठीक ही तो है, संवेदन, आत्मा के साथ बना रहने वाला है। चाहे गलत हो या सही। **संवेदन, आत्मा का लक्षण है। महसूस करना, अनुभव करना आत्मा का लक्षण है। केवलज्ञान आत्मा का लक्षण नहीं है, वह आत्मा का स्वभाव है। स्वभाव की प्राप्ति उपयोग के ऊपर श्रद्धान करने से ही हुआ करती है। अन्यथा तीन काल में भी कोई रास्ता नहीं है।** स्वभाव का श्रद्धान करो? जब ऐसा कहते हैं तो आप कहते हैं कि कुछ

दिख ही नहीं रहा है महाराज! लेकिन श्रद्धान तो उसी का किया जाता है जो दिखता नहीं है, तभी सम्यग्दर्शन होता है।

लक्षण अन्यत्र नहीं मिलना चाहिए। उसका नाम विलक्षण है। विलक्षण होना चाहिए भिन्न पदार्थों से। घुले-मिले हुए बहुत सारे पदार्थों को पृथक करने की विधि का नाम ही लक्षण है। लक्ष्य तक पहुंचने के लिए लक्षण ही दिखता है, लक्ष्य नहीं। यदि लक्षण भी नहीं दिखता तो हम नियम से भटक रहे हैं ऐसा समझ लीजिए। आत्मा दिखेगा नहीं, आत्मा का स्वरूप भी नहीं दिखेगा। घबड़ाना नहीं। आचार्य कहते हैं- जो दिखेगा वह हमेशा बना रहेगा उसका लक्षण अलग है। चाहे सो रहे हों या खा रहे हों, पी रहे हों या सोच रहे हों। चाहे पागल भी क्यों न बन जायें। पागल भी अपना संवेदन करता रहता है। महाराज! पागल का कैसा संवेदन होता है? होता तो है लेकिन वह संवेदन पागल होकर के ही देखा जा सकता है, किया जा सकता है, कहा नहीं जा सकता, संवेदन कहने की वस्तु ही नहीं है।

इस प्रकार उपयोग रूप लक्षण को पकड़कर घने अन्धकार में भी कूद सकते हैं। इसमें घबड़ाने की कोई आवश्यकता नहीं। लेकिन जिस समय लक्षण हाथ से छूट जाएगा, उस समय अन्धकार में नियम से भटकन है। हमें इसलिए नहीं घबड़ाना है कि कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा, फिर कैसे प्राप्त करें उसे? किसके ऊपर विश्वास करें? ''विश्वास उसके ऊपर करना है जो हमें प्राप्त करना है। और वर्तमान में क्या करना है? वर्तमान में जो अवस्था है उसी को देखकर विश्वास को दृढ़ बनाते चले जाना है। आत्मा को वर्तमान में तो मात्र प्रत्यक्ष ज्ञानी ही देखते हैं और हम **''आगमप्रामाण्यात् अभ्युपगभ्यमानानां''** से जानते हैं। दूसरी बात, जितनी भी अर्थपर्याय होती हैं वे सारी की सारी आगम प्रमाण के द्वारा ही जानी जाती हैं। ये स्वभावभूत पर्यायें जो हैं।

लक्षण पर विश्वास करिये, जो त्रैकालिक बना रहता है। स्वभाव त्रैकालिक नहीं होता। आप कहेंगे महाराज! आचार्यों ने तो कहीं-कहीं पर स्वभाव को भी त्रैकालिक होता है, ऐसा कहा है।.... हाँ, कहा तो है लेकिन, जिस स्वभाव की बात यहाँ पर कह रहा हूँ, उस स्वभाव को त्रैकालिक नहीं कहा। उन्होंने कहा है- **''अभूदपुव्वो हवदि''**!

ज्ञान को, सामान्य बनाने पर, उपयोग को सामान्य बनाने पर, यह स्वभाव त्रैकालिक रहेगा। चाहे निगोद अवस्था हो या सिद्धावस्था, या और भी शेष अवस्थाएं। परन्तु केवलज्ञान रूप जो स्वभाव है, वह त्रैकालिक नहीं होता। तत्कालिक हुआ करता है। यह बात अलग है कि उत्पन्न होने के उपरान्त, वह अनन्तकाल तक अक्षय रहेगा, तब भी पर्याय की अपेक्षा तो क्षणिक रहेगा। अर्थपर्याय तो और भी क्षणिक होती है। क्षणिक होना ही तो बता रहा है कि क्षय से उत्पन्न होता है- हो रहा है। हाँ! गुण जो हैं वे त्रैकालिक हैं। द्रव्य भी त्रैकालिक हुआ करता है। गुण की अपेक्षा से लक्षण होता है, पर्याय की अपेक्षा नहीं। केवलज्ञान को आत्मा का लक्षण माना जाए तो ''अव्याप्तिदोष'' आ जाएगा। इसलिए वह लक्षण नहीं स्वभाव है। उस स्वभाव की प्राप्ति कैसे होती है? जब साधना करेंगे तब। साधना कैसी करें महाराज? आचार्य कहते हैं-इसको (आत्मा को) अरस मान लें, अगन्ध मान लें, और अरूपी मान लें। जब अगन्ध है तो सूंघने के द्वारा हमें सुख नहीं आयेगा, जब अरस है तो चखने से

पकड़ में नहीं आयेगा, अत: चखना छोड़ दें। देखने में तो रूपग्रहण होगा और आत्मा का स्वभाव अरूप है। अत: देखने का कोई मतलब नहीं, फिर उतार दीजिए चश्मा, आंख भी बन्द कर लीजिए, अब देखने की कोई आवश्यकता नहीं। इसलिए, जो कल भगवान् बनने वाले हैं वह नासादृष्टि करेंगे। क्यों करेंगे? कल ही समझ में आयेगा, कि मेरा अस्तित्व होते हुए भी, वह मुझे तब तक नहीं मिलेगा जब तक सब ओर से दृष्टि नहीं हटेगी। आंख बन्द करूंगा, कान बन्द करूंगा- कानों को बन्द करने का अर्थ, अब रेडियो की आवश्यकता नहीं। मतलब यही हुआ कि भीतर, अपने में उतरना है। भीतर की आवज को सुनो, जो आवाज शब्द नहीं, अशब्द हैं। अगन्ध है, सूंघने के द्वारा पकड़ में नहीं आयेगी। किससे पकड़ें? जिन-जिन साधनों के माध्यम से यह संसारी प्राणी पकड़ने की चेष्टा कर चुका है, कर रहा है और आगे करने वाला है, उन सभी को मिटाने का प्रयास ही साधना हो सकता है।

तू अरूपी है, तो छोड़ दे रूप को और उसके पकड़ने के साधनों को। करण और आलोक प्रमाण की उत्पत्ति में कारण नहीं। जैसा कि ''परीक्षामुख'' में कहा है-

''नार्थालोकौ कारणं''

अर्थ और आलोक के द्वारा ज्ञान की उत्पत्ति नहीं होती। इसी तरह इन्द्रियों के द्वारा भी ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती। इनके द्वारा मात्र पुद्गलपदार्थ ही पकड़ में आते हैं, और कुछ भी नहीं। मतिज्ञान के द्वारा आप क्या पकड़ेंगे? पंचेन्द्रियों के विषय ही तो पकड़ेंगे। इसके अलावा मतिज्ञान का क्षेत्र-विषय, और है ही नहीं। मतिज्ञान के द्वारा पंचेन्द्रिय के विषयों का ग्रहण होता है, पंचेन्द्रिय के विषय सो आत्मा नहीं, मात्र जड़। फिर अपने आपको जानने के लिए- ''मैं कौन हूँ'' जानने के लिए आचार्य कहते हैं- ''वह नहीं, जो आज तक तुम समझते थे। यह नहीं, यह नहीं, नेति-नेति, एक ऐसी मान्यता नीति है। इतना ही नहीं, ''यह नहीं'' के साथ ''इतना भी नहीं'' मानना होगा। फिर कितना? जितना पूछोगे, उतना नहीं। क्योंकि पूछना बाहरी दृष्टिकोण से हो रहा है और बात चल रही है अन्तरंग की। इसलिए ''यह नहीं'' कहते ही समझने वाला अपने आप समझ लेता है कि, यह ठीक नहीं अत: दूसरी प्रक्रिया अपनानी होगी।

आत्मा के लिए, दुनिया की किसी भी वस्तु की उपमा नहीं दी जा सकती। आत्मा अनिर्दिष्टसंस्थान रूप और अलिंगग्रहण है, और वस्तुएं इससे विपरीत। ऐसे विचित्र स्वरूप वाली आत्मा को हमें प्राप्त करना है। इसमें बहुत देर तो नहीं लगेगी, मात्र पांच इन्द्रियों के विषयों को गौण करना आवश्यक होगा। **दुनिया को गौण मत करो, दुनिया को समाप्त करने का प्रयास मत करो, अपनी दृष्टि को, अपने भावों को, अपने दृष्टिकोण को पलटने का प्रयास करो।**

राजस्थान की बात है। एक सज्जन ने कहा- महाराज! आपकी चर्या बहुत अच्छी है, बहुत प्रभावित भी हुआ हूँ आपसे। लेकिन एक बात है, यदि आप नाराज न हों तो। नाराज होने की क्या बात? आपको जहाँ सन्देह हो, बताओ? देखिए, बात ऐसी है नाराज नहीं होइये। हाँ-हाँ, कह रहा हूँ, नाराज होना ही क्यों? नाराज है तो महाराज नहीं, महाराज है तो नाराज नहीं। तो महाराज ऐसा है, आप एक लंगोटी लगा लो तो अच्छा होगा। हमने

सोचा- इन्होंने कुछ सोचा तो है। सामाजिक प्राणी है, संभव है इनके लिए विकार नजर में आ रहा हो। मैंने कहा- अच्छा ठीक है। बात ऐसी है कि एक लंगोट तो आप खरीदकर ला देंगे लेकिन फिर दूसरी भी तो चाहिए। एक दिन एक पहनूंगा, एक दिन दूसरी। दूसरी आ भी जाए तो उसके धोने आदि का प्रबंन्ध करना होगा तथा फटने पर सीने या नयी लाने की पुन: व्यवस्था करनी होगी। हाँ, जीवन बहुत लम्बा चौड़ा है, इससे आप जैसे लोग भी बहुत मिलेंगे। अत: सर्वप्रथम आपसे ही मेरा सुझाव है कि आपके जब कभी भी यह रूप देखने में आ जाए तो उस समय आप अपनी ही आंखों पर एक हरी पट्टी लगा लीजिए, उसको लगाना आंखों को भी लाभदायक भी होगा और रोशनी से शान्ति-छुटकारा भी मिलेगा।

इतना कहते ही उनकी समझ में आ गया कि कमी कहां है। वस्तुत: विकार हमारी दृष्टि में है। विकार दुनिया में नहीं है, वस्तु में नहीं है। केवल दृष्टि में विकार को हटाना है, दृष्टि को मोड़ना है। दुनिया पर हर चीज थोपना नहीं चाहिए। ध्यान रखिये ! सामने वाले के ऊपर जितना थोपा जाएगा, उतना ही वह अधिक विकसित-अधिक दिमाग वाला होता जाएगा। वह विचार करेगा कि यह क्यों थोपा जा रहा है? जैसा किसी के पीछे जितनी जासूसी लगाई जाती है वह उतना ही उससे ऊपर निकलने का प्रयास करता है क्योंकि उसके पास माइन्ड है, ज्ञान है। वह काम करता रहता है। रक्षा का प्रावधान करता रहता है। इसलिए सबसे बढ़िया यही है कि बाहर की ओर न देखें।

मार्ग सरल है, स्वाश्रित है- पराश्रित नहीं है। आनन्दवाला है, कष्टदायक नहीं है। आंख मीच लो, 10-15 मिन्टि के उपरान्त, माथा का दर्द भी ठीक हो जाएगा। क्योंकि इन्द्रियों के माध्यम से जो मिल रहा है, हम उसकी खोज में नहीं हैं। हमारी खोज, उस रूप के लिए है जो सबसे अच्छा हो, उस गन्ध के लिए है जो तृप्ति दे, उस शब्द के लिए है जो बहुत ही प्रिय लगे-कर्णप्रिय हो। यह सब इन्द्रियों के माध्यम से ''ण भूदो ण भविस्सदि'। पंचेन्द्रिय के विषय मिलते रहते हैं और उनमें इष्ट-अनिष्ट कल्पना होती है। यह कल्पना आत्मा में- उपयोग में होती है वह भी मतिज्ञान के द्वारा नहीं श्रुतज्ञान के द्वारा होती है। मतिज्ञान के द्वारा इष्ट-अनिष्ट कल्पना, तीन काल में संभव नहीं है। मतिज्ञान एक प्रकार से निर्विकल्प-निराकार होता है। उसमें वस्तुएं दर्पणवत् झलकती हैं। झलक जाने के उपरान्त यह किसकी है? यह विचारधारा बनना श्रुतज्ञान की देन है, मतिज्ञान की नहीं। श्रुतज्ञान के माध्यम से ही उसे चाहा जाता है, इससे वस्तु पर श्रुतज्ञान का आयाम होता जाता है। या यूं कहें, यह मेरे लिए बुरा है, यह मेरे लिए अच्छा है, इस प्रकार की तरंगें उठती रहती हैं।

''मतिज्ञानं यद्‌गृहयते तदालम्बय वस्त्वनन्तरं ज्ञानं''

अर्थात् मतिज्ञान के द्वारा ग्रहण की गई वस्तु का अवलम्बन करके प्रकारान्तर से वस्तु का जानना श्रुतज्ञान है। श्रुतज्ञान बहुत जल्दी काम करता है, क्योंकि वह सुख का इच्छुक है। हमें मतिज्ञान को कन्ट्रोल करके श्रुतज्ञान को कन्ट्रोल करने का प्रयास करना चाहिए। यही मोक्षमार्ग में ''पुरुषार्थ'' माना जाता है।

सुख क्या है? दु:ख का अभाव होना ही सुख है। जिस प्रकार से यह कहा गया, उसी प्रकार से आत्मा के विषय में भी जानना चाहिए। कारण कि नास्ति और अस्ति दोनों कथन एक साथ संभव नहीं हैं। यह वस्तुस्थिति

है। जिस समय वस्तु उल्टी होती है उस समय सुलटी नहीं हो सकती। जिस समय सुलटी है उस समय उलटी नहीं। जिस समय आरोग्य रहता है उस समय रोग नहीं रहता, जिस समय रोग रहता है इस समय आरोग्य नहीं रहता। किन्तु जिस समय रोग आ जाता है उस समय आरोग्य का अनुभव भले ही ना हो, लेकिन आरोग्य का श्रद्धान तो रह सकता है अर्थात् रोग का अनुभव करना मेरा स्वभाव नहीं है अत: इसे मिटा देना होगा। जब तक रोग रहेगा, तब तक स्वभाव का, निरोगता का अनुभव संभव नहीं। महाराज! अनुभव रहित स्वभाव को कैसे माने? आचार्य कहते हैं- मानो! आगम के द्वारा कहे तत्त्व पर श्रद्धान रखो। छद्मस्थावस्था में स्वभाव का अनुभव तीन काल में भी संभव नहीं, केवलज्ञान के द्वारा वह साक्षात् हो सकता है। आचार्य कहते हैं कि अर्थपर्याय विशिष्ट द्रव्य को धारणा का विषय बनाना अलग है और उसका संवेदन-साक्षात्कार करना अलग बात है। वह केवलज्ञान के द्वारा ही संभव है।

''केवलज्ञानापेक्षया तु तत् मानसिकप्रत्यक्षं परोक्षमेव किन्तु इन्द्रियज्ञानापेक्षया तत्कथंचित्प्रत्यक्षमपि''

आचार्य कहते हैं कि- केवलज्ञान की अपेक्षा से वह मानसिक-प्रत्यक्ष या छद्मस्थ ज्ञान परोक्ष ही है। मानसिक प्रत्यक्ष को ''प्रत्यक्ष'' की संज्ञा इन्द्रिय ज्ञान के अभाव को लेकर दी गई है। वह भी श्रद्धान के अनुरूप चलती है अत: पराश्रित है। स्वभाव को हमें प्राप्त करना है। अत: उसी का विश्वास-श्रद्धान आवश्यक है। कैसा है वह? 'अभूदपुव्वो हवदि सिद्धो'' ऐसा पंचास्तिकाय में कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है कि सिद्धत्वरूप जो है वह अभूतपूर्व है। अभूतपूर्व का मतलब क्या है? अभूतपूर्व का अर्थ बढ़िया- अपश्चिम है, अपूर्व वस्तु है। अर्थात् ऐसी अवस्था कभी हुई नहीं थी। इसी तरह का अर्थ करणों में भी आपेक्षित होता है। जब गुणस्थान के क्रम बढ़ते जाते हैं उस समय विशुद्धि बढ़ती जाती है- भावों में वृद्धि होती है। उन कारणों में एक अपूर्वकरण और एक अनिवृत्तिकरण भी है। जिनमें परिणामों की अपूर्वता होती है तुलना नहीं होती एक दूसरे से। इस प्रकार की व्यवस्था चलती रहती है उस समय।

अर्थ यह हुआ कि स्वभावभूत वस्तुतत्त्व आज तक उपलब्ध नहीं हुआ हमें। उसका रूप, उसका स्वरूप प्रतीकारात्मक है। यह नहीं है, यह नहीं है-ऐसा प्रतिकार करते आइये-पलटते जाइये। और बिल्कुल मौन हो जाइये। जिसको पलट दिया उसके बारे में कुछ भी नहीं सोचिये। आपके पास वस्तुओं की संख्या बहुत कम है। लेकिन दिमाग में- सोचने में, उससे कई गुनी हो सकती है। दिमाग की यह कसरत तब अपने आप रुक जाएगी जब यह विश्वास हो जाएगा कि इसमें मेरा ''बल'' नहीं है।

कम्मे णोकम्मम्हि य अहमिदि अहकं च कम्मणोकम्मं।
जा एसा खलु बुद्धी अप्पडिबुद्धो हवदि ताव॥

तब तक अप्रतिबुद्ध बल होता है जब तक कि कर्म में, नोकर्म में, मेरा-तेरा करता रहता है तब तक वह ज्ञानी नहीं, अज्ञानी माना जाता है। ''यह मैं हूँ, यह मैं हूँ- ऐसा चौबीसों घण्टे इन्द्रियों के व्यापार के माध्यम से सचित्त-अचित्त-मिश्र पदार्थों से जो कि भिन्न हैं, सम्बन्ध जोड़कर चलना और उसके साथ जो पोषक द्रव्य हैं

उनके संयोग से हर्ष और वियोग से विषाद का अनुभव करना, अज्ञानी का काम है। इसी के माध्यम से संसार की यात्रा बहुत लम्बी-चौड़ी होती जाती है। जैसे- अमेरिका में आपकी एक शाखा चलती हो। अब यदि अमेरिका पर बंबारडिंग होने लगे तो, आपके हृदय में भी वह शुरू हो जाएगी। तत्सम्बन्धी सुख-दु:ख होने लगता है। आप से पूछते हैं कि भैया! आपका देश तो भारत है अमेरिका नहीं। वह तो विदेश है। बात तो ठीक है, लेकिन हमारा व्यापार सम्बन्ध तो अमेरिका से भी है। इसी प्रकार हमारा व्यापार भी वहाँ चलता है जहाँ इन्द्रियां हैं। उन्हीं से हित-अहित, सुख-दु:ख, हर्ष-विषाद का अनुभव करते हैं।

पण्डित जी ने अभी सात प्रकार की ''टेबलेट'' के विषय में बताया। लेकिन मैं तो यह सोच रहा था कि संसार में सात प्रकार के भय होते हैं और सभी प्राणी उन भयों से घिरे हुए हैं। इसीलिए उन्होंने सात प्रकार की गोलियाँ निकाली होंगी। परन्तु सम्यग्दृष्टि सात प्रकार के भयों से रहित होता है इसलिए नि:शंक हुआ करता है। जैसा कि ''समयसार'' में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने कहा है-

सम्मादिट्ठिजीवा णिस्संका होंति णिब्भया तेण।
सत्तभयविप्पमुक्का जम्हा तम्हा दु णिस्संका॥

सातो भयों से मुक्त हो गये तो फिर गोली की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी, और न कोई शस्त्रों की। क्योंकि उसके द्वारा न आत्मा मरता है, न मरा है और न मरेगा। महाराज! फिर जन्म किसका हो रहा है आज? इसी को तो समझना है। पांच दिन रखे हैं जिनमें एक दिन जन्म के लिए भी है।

बहुत दिनों की प्रतीक्षा के उपरान्त एक के घर में सन्तान की प्राप्ति हुई। जिस समय जन्म हुआ, उसी समय उधर ज्योतिर्विद् को बुलाकर कह दिया- भैय्या! इसकी कुण्डली बनाकर लाना और इधर साज-सज्जा के लिए कहा और मिठाई भी बंटने लगी। सब कुछ हो गया। लेकिन दूसरी घड़ी में ही ज्योतिषी कुण्डली बनाकर ले आया। कहता है- संतान की प्राप्ति बहुत प्रतीक्षा के बाद हुई, लेकिन! लेकिन क्यों कह रहे हो? महान् पुण्य के उदय से हुई, फिर लेकिन क्यों?.... हाँ-हाँ पुण्य के उदय से हुई थी और लम्बी प्रतीक्षा के बाद हुई, बिल्कुल ठीक है। लेकिन...। लेकिन क्यों लगा रहे हैं?..... बात ऐसी है कि पाप और पुण्य दोनों का जोड़ा है। इसीलिए ''हुई थी'' ''पासटेन्स'' है। अब वर्तमान में वह नहीं है, वह मर जाएगी। इतने में ही वहाँ से खबर आ गई कि मृत्यु हो गई। सुनते ही विचार में पड़ गया। बहुत दिनों के उपरान्त एक फल मिला था, वह भी किसी से नहीं देखा गया। उसके ऊपर भी पाला पड़ गया। सुना है कि एक महाराज आए हैं जो बहुत पहुँचे हुए हैं। कहाँ पहुँचे हैं? पता नहीं, लेकिन उनकी दृष्टि में तो बहुत कुछ हैं, होंगे। वह भागता-भागता गया, उस पुत्र को लेकर। कहा- जिस प्रकार इसको दिया, उसी प्रकार ''दिया'' (दीपक) के रूप में रखो तो ठीक। नहीं तो क्या होगा? नहीं-नहीं, आप ऐसा नहीं कहिए। आप करुणावान् हैं, दयावान् हैं, मेरे ऊपर कृपादृष्टि रखिये और इसे किसी भी प्रकार से बचा दीजिए, क्योंकि आपके माध्यम से बच सकता है- ऐसा सुना है। महाराज बोले मेरी बात मानोगे? हाँ-हाँ, नियम से मानूंगा। जरूर मानूंगा। उसने सोचा अपने को क्या? यदि काम कराना है तो बात मानना ही पड़ेगी। महाराज बोले- अच्छा! तो तू कुछ सरसों के दाने ले आ, तेरा बेटा उठ जाएगा। इतना सुनना था

कि वह तत्परता से भागने लगा। तभी महाराज ने कहा- इधर आओ, इधर आओ, तुम्हें सरसों के दाने तो लाना है लेकिन साथ में यह भी पूंछ लेना कि उसके घर में कभी किसी की मौत तो नहीं हुई? जिसके यहाँ मौत हुई हो, उसके यहाँ के मत लाना, क्योंकि वह सरसों दवाई का काम नहीं करते ।..... ठीक है, ठीक है- कहकर वह चला गया। एक जगह जाकर कहता है- भैया! मुझे कुछ सरसों के दाने दे दो, जिससे हमारा पुत्र पुन: उठ (जी) जाये। अच्छी बात है, ले लो, ये लो सरसों के दाने, उसने दे दिए और देते ही वह भागने लगा कि याद आया और पूंछा- अरे! यह तो बताओ आपके यहाँ कोई मरा तो नहीं? अभी तो नहीं पर एक साल पहले हमारे काकाजी मरे थे ।..... अच्छा, तब तो ये सरसों नहीं चलेंगे। दूसरे के यहाँ गया, वहां पर भी सरसों मांगे और पूछा- सरसों मिल गये और उन्होंने कहा- इन दिनों तो कोई नहीं मरा पर कुछ दिनों पहले हमारे दद्दा (दादा) जी मरे थे। इस प्रकार सुनते ही उसने सरसों लौटा दी। ऐसा करते-करते वह प्रत्येक घर गया। लकिन एक भी घर ऐसा नहीं मिला जिसमें किसी न किसी का मरण न हुआ हो। जो जन्मे थे, वही तो मरे होंगे। इस प्रकार मरण की परम्परा चल रही है। एक और घर में गया और देखा कि- एक जवान मरा पड़ा है, अभी ही मरा होगा, क्योंकि उसका शव अभी तक उठाया नहीं गया। उसके घर के लोग, अभी भी हाथ-पैर पटक रहे हैं, रो रहे हैं, चिल्ला रहे हैं। दृश्य देखकर मौन हो गया। भागते-भागते थक चुका था, अत: वहीं खड़े-खड़े कुछ सोचने लगा- किसी का घर ऐसा नहीं मिला जहाँ मरण न हुआ हो। सबके यहाँ कोई न कोई मरण को प्राप्त हुआ है। अर्थात् जिसने भी जन्म लिया है वह अवश्य मरेगा। इससे बचाना किसी के वश की बात नहीं है... इत्यादि। उसे औषध मिल गया, मंत्र मिल गया, सोचा- महाराज वास्तव में पहुँचे हुए हैं ।..... भागता-भागता उनकी शरण में गया और कहने लगा- महाराज! गलती हो गई? भैय्या! लाओ सरसों के दाने, मैं अभी उठाये देता हूँ तुम्हारे पुत्र को ।... नहीं, महाराज! अब वह नहीं उठ सकता, मुझे बोध हो गया।

यह जीवन की लीला है बन्धुओ! मालूम है आपको? व्याकरण में एक ''ज्या'' धातु आती है। उसका अर्थ ''वयोहानौ'' होता है। प्रात:काल कहा था कि मरण की क्या परिभाषा है, मरण क्या है? ''आयुक्खयेण मरणं'' और जीवन की परिभाषा क्या, जीवन क्या? उम्र की समाप्ति होना या उम्र की हानि होती चली जाना जीवन है। मतलब यह हुआ कि मरण और जीवन में कोई अन्तर नहीं है मात्र इसके कि मरण में पूर्णत: अभाव हो जाता है और जीवन में क्रमश: प्रत्येक समय हानि होती चली जाती है। हानि किसकी और क्यों? वय की हानि, वय का अर्थ उम्र या आयुकर्म। अर्थात् आयुकर्म की हानि का नाम जीवन है और उसके पूर्णत: अभाव का- क्षय का नाम मरण।

हमारे जीवन में मृत्यु के अलावा और किसी का कुछ भी संवेदन नहीं हो रहा है। भगवती आराधना में एक गाथा आयी है, वह मूलाचार, समयसार आदि ग्रन्थों में भी आयी है, जिसमें आवीचिमरण का वर्णन किया है। आवीचिमरण का अर्थ यह है कि पल-पल प्रतिपल पलटन चल रहा है। कोई भी व्यक्ति ज्यों का त्यों बना नहीं रह सकता। कोई अमर नहीं। महाराज देवों को तो अमर कहते हैं? वहाँ अमर का मतलब है बहुत दिन के बाद मरना। इसलिए अमर है। हम लोगों के सामने उनका मरण नहीं होता, इसलिए भी अमर है। किन्तु उन लोगों की

दृष्टि में हम मरते रहते हैं अत: मर्त्य माने जाते हैं। रोज का मरना मरते हैं हम लोग। रोज मर रहे हैं? हाँ प्रति पल मरण प्रारम्भ है, इसी का नाम आवीचिमरण है। मरण की ओर देखो तो मरण, और जीवन की ओर देखो तो मरण।

अंग्रेजी में एक बहुत अच्छी बात कही जाती है। वह यह है कि- एक दिन का पुराना हो या सौ सालों का, उसे पुराना ही कहते हैं। जैसे- ''हाउ ओल्ड आर यू''। हम ओल्ड का अर्थ पुराना तो लेते हैं परन्तु बहुत साल पुराना लेते हैं। लेकिन नहीं, पुरा का अर्थ मतलब एक सेकेण्ड बीतने पर भी पुरा है। अब देखिये पुरा क्या है और अपर क्या है? एक-एक समय को लेकर चलिये, चलते-चलते एक ऐसे बिन्दु पर आकर के टिक जायेंगे आप, जहाँ पर जीवन और मरण, पुरा और अपर एक समय में घटित हो रहे हैं।

मैं पूछता हूँ- सोमवार और रविवार के बीच में कितना अन्तर है? आप कहेंगे- महाराज! एक दिन का अन्तर है। लेकिन मैं कहता हूँ कि सोचकर बताइये? इसमें सोचने की क्या बात महाराज! आप ही बताइये? लीजिये, सोमवार कब प्रारम्भ होता है और रविवार कब? रविवार कब समाप्त होता है और सोमवार कब? इस तथ्य को देखिये, तो पता चल जाएगा। आप घड़ी को लेकर के रविवार के दिन बैठ जाइये, क्रमश: एक-एक मिनिट, एक-एक घण्टा बीत रहा है। अब रात आ गयी। रात में भी एक-एक मिनिट, एक-एक घण्टा बीत रहा है। घण्टों पर घण्टे निकलते चले गये तब कहीं रात्रि के 11 बजे। अब सवा ग्यारह, साढ़े ग्यारह, और अभी बारह बजने को कुछ मिनिट-कुछ सेकेण्ड ही शेष हैं तब भी रविवार है। आप देख रहे हैं, सुई घूम रही है। अब मात्र एक मिनिट रह गया, फिर रविवार है। रविवार अभी नहीं छूट रहा है। अब सेकेण्ड के काँटों की ओर आपकी दृष्टि केन्द्रित है। एक सेकेण्ड शेष है तब तक रविवार ही देखते रहे और देखते-देखते सोमवार आ गया। पता भी नहीं चला। देखा आपने कि कितने सेकेण्ड का अन्तर है रविवार और सोमवार में? यदि आप उस सेकेण्ड के भी आधुनिक आविष्कारों के माध्यम से 10 लाख टुकड़े कर दें तो और स्पष्ट हो जाएगा। लेकिन सिद्धान्त कहता है वर्तमान सेकेण्ड में असंख्यात समय हुआ करते हैं। इस असंख्यात समयों में यदि एक समय भी बाकी रहेगा तो उस समय भी रविवार ही रहेगा। इस अन्तर को अन्दर की घड़ी से ही देखा जा सकता है अर्थात् एक समय ही रविवार और सोमवार को विभाजित करता है।

इसी तरह जीवन और मरण का अन्तर है। आपकी दृष्टि में थोड़ा भी अन्तर आया कि देव-गुरु-शास्त्र के बारे में भी अन्तर आ गया। सम्यग्दर्शन में भी अन्तर आ गया। इसको पकड़ने के लिए हमारे पास कोई घड़ी नहीं है पर आगम ही एक मात्र प्रमाण है।

हे भगवन्! कैसा हूँ? मेरे गुणधर्म कैसे हैं? भगवान् कहते हैं कि मेरे पास कोई शब्द नहीं, जिनके द्वारा स्वरूप का बोध करा सकूं। कुछ तो बताइये, आपके उपदेश के बिना कैसे दिशा मिलेगी? तो वे कहते हैं कि- ''यह दशा तेरी नहीं है'' इतना तो मैं कह सकता हूँ परन्तु ''तेरी दशा कैसी है'' इसे ना मैं दिखा सकता हूँ और ना ही आपकी आंखों से उसे देखने की योग्यता है। नई आंखें आ नहीं सकती। सबको अपने-अपने चश्मे का रंग बदलना होगा, भीतर का अभिप्राय- दृष्टिकोण बदलना होगा। इतना सूक्ष्म तत्त्व है कि विभाजन करना संभव ही

नहीं। जैसे समय में भेद नहीं रविवार और सोमवार के बीच में इतनी मेहनत के बाद भी अन्तर समाप्त हुआ और कब सोमवार आ गया, यह बता नहीं सके। संभव है व सन्धि आपकी घड़ी में स्पष्ट ना हो, लेकिन आचार्य कहते हैं कि- केवलज्ञान के द्वारा हम इसे साफ-साफ देख सकते हैं और श्रुतज्ञान के द्वारा इसे सहज ही प्रमाण मान सकते हैं।

देव-गुरु-शास्त्र के ऊपर श्रद्धान करिये, ऐसा मजबूत श्रद्धान करिये, जिसमें थोड़ी भी कमी न रहे। ऐसा श्रद्धान ही कार्यकारी होगा। सिद्धान्त के अनुरूप श्रद्धान बनाओ। तत्त्व को उलट-पलट कर श्रद्धान नहीं करना है। हमें अपने भावों को सिद्धान्त/तत्त्व के अनुसार पलटकर लाना है। जैसे रेडियो में सुई के अनुसार स्टेशन नहीं लगती बल्कि स्टेशन के नम्बर के अनुसार सुई को घुमाने पर ही विविधभारती आदि स्टेशन लगती है। एक बाल मात्र का भी अन्तर हो गया- सुई इधर की उधर हो गयी तो सीलोन लग जाएगी। अब संगीत का मजा नहीं आयेगा। यही स्थिति भीतरी ज्ञान-तत्त्वज्ञान की भी है। कभी-कभी हवा (परिणामों के तीव्र वेग) के द्वारा यहाँ की सुई इधर से उधर की ओर खिसक जाती है तो डबल स्टेशन चालू हो जाते हैं। किसको सुनोगे, किसको कैसे समझोगे? तत्त्व बहुत सूक्ष्म है। वस्तु का परिणमन बहुत सूक्ष्म है, उसे पकड़ नहीं सकते।

जन्म-जरा-मृत्यु, ये सभी आत्मा की बाहरी दशायें हैं। अनन्तकाल से यह संसारी प्राणी आयुकर्म के पीछे लगा हुआ है। अन्य कर्म तो उलट-पलटकर अभाव को प्राप्त हो जाते हैं, परन्तु आयुकर्म का उदय एक सेकेण्ड के सहस्रांश के लिए भी अभाव को प्राप्त नहीं हुआ। यदि एक बार अभाव को प्राप्त हो जाए तो मुक्त हो जाये, दुबारा होने का फिर सवाल ही नहीं। आयुकर्म प्राण है जो चौदहवें गुणस्थान तक माना जाता है। वह जब तक रहता है तब तक जीव संसारी माना जाता है, मुक्त नहीं माना जा सकता।

जन्म क्या है, मृत्यु क्या है? इसको समझने का प्रयास करिये। ये दोनों ही ऊपरी घटनाएं हैं। आने-जाने की बात नयी नहीं है, बहुत पुरानी है। संसार में कोई भी नया प्रकरण नहीं है, अनेकों बार उलटन-पलटन हो गया। क्षेत्र, स्पर्शन के भंग लगाने पर तीन लोक में सर्वत्र उलटन-पलटन चल रहा है। अनन्तकाल से कस्सम-कस चल रहा है। जिस प्रकार चूने में पानी डालने से रासायनिक प्रक्रिया होती है। उसी प्रकार जीव और पुद्गल, इन दोनों का नृत्य हो रहा है। इसे आंख बन्द कर देखिये, बहुत अच्छा लगा। परन्तु आंख खोलकर देखने से मोह पैदा होगा, राग पैदा होगा। जो व्यक्ति इस शरीर को, पर्याय को लेकर अपनी उत्पत्ति मान लेता है तो उसे आचार्य कुन्दकुन्ददेव सम्बोधित करते हैं कि- तू पर्याय बुद्धिवाला बनता जा रहा है, परिवर्तन-परिणमन तो आत्मा में निरन्तर हो रहा है। क्षेत्र में भी हो रहा है। इस क्षेत्र में लाया गया। वहां अपना डेरा जमाया। नोकर्म के माध्यम से इसे जन्म मिला। इसमें मात्र पर्याय का परिवर्तन है, वह भी कर्मकृत पर्याय का परिवर्तन। उपयोग का नहीं। आत्मा का जो लक्षण पहले था वह अब भी है आगे भी रहेगा।

जो व्यक्ति इस प्रकार के जन्म से, जन्म-जयन्ती से हर्ष का- उल्लास का अनुभव करता है उसे जन्म से बहुत प्रेम है। जबकि भगवान् ने कहा है कि जन्म से प्रेम नहीं करिये। यह दोष है, महादोष है, इससे मुक्त हुए बिना भगवत् पद की उपलब्धि नहीं होगी। यदि आप जन्म को अच्छा मानते हैं, चाहते हैं तो जन्म जयन्ती

मनाइये। यदि ऐसा कहते हैं कि भगवान की क्यों मनाई जाती है? तो ध्यान रखिये उनकी जन्म जयंती इसलिए मनाई जाती है कि वह तीर्थंकर होने वाले हैं। असंख्यात जीवों के कल्याण का दायित्व इनके पास है, इसकी साक्षी के लिये- इसे स्पष्ट करने के लिए इन्द्र जो कि सम्यग्दृष्टि होता है, आता है और जन्मोत्सव मनाता है। आज पंचमकाल में जो जन्म लेता है वह मिथ्यादर्शन के साथ जन्म लेता है, इससे जन्मोत्सव मनाना यानि मिथ्यादर्शन का समर्थन करना है, पर्यायबुद्धि का समर्थन है। इसलिए ऐसा न करें। सम्यग्दृष्टि तो भरत और ऐरावत क्षेत्र में पंचमकाल में आते ही नहीं। वे वहाँ जाते हैं जहाँ से मोक्षमार्ग का- निर्वाण का मार्ग खुला है। पुण्यात्माओं का जन्म यहां नहीं होता, यहां जन्म लेने वाले मिथ्यादर्शन-मिथ्याज्ञान-मिथ्याचारित्र के साथ ही आते हैं और उनकी जन्म-जयन्ती मनाना मिथ्यादर्शन-मिथ्याज्ञान-मिथ्याचारित्र की ही जयन्ती है इससे सम्यग्दर्शन की कोई बात नहीं। सम्यग्दर्शन के लिए कम से कम आठ वर्ष लगते हैं। इससे पूर्व सम्यग्दर्शन होने की कोई गुंजाइश भी नहीं होती। और इस समय मिथ्याचारित्र ही होता है। जबकि जैनागम में सम्यक्चारित्र को ही पूज्य कहा गया है इसके अभाव में तीन काल में भी पूजता नहीं आ सकती। ध्यान रखिये बन्धुओ! मिथ्यादृष्टि की जयन्ती मनाना, मिथ्यादर्शन एवं मिथ्याचारित्र का पूजत्व स्वीकार करना है, जो कि संसार परिभ्रमण का ही कारण है। यदि हमें संसार से मुक्त होना है तो कुछ प्रयास करना होगा, और वह प्रयास आजकल की जन्म-जयन्तियों के मनाने से सफल नहीं होगा। बल्कि उनकी दीक्षा तिथि अथवा संयमग्रहण दिवस जैसे महान् कार्य के स्मरण से ही हमारी गति, उस ओर होगी जिस ओर हमारा लक्ष्य है।

सभी प्राणी लक्ष्य को पाना चाहते हैं, अत: उन्हें यह ध्यान रखना होगा, यह प्रयास करना होगा कि वे मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान एवं मिथ्याचारित्र का पालन एवं समर्थन न कर सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र की ओर बढ़े, जो कि आत्मा का धर्म है एवं शाश्वत सुख (मोक्षसुख) को देने वाला है।

''महावीर भगवान की जय'' (केसली 8-3-86 जन्मोत्सव दिवस संन्ध्या)

क्रमश: .....

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति

रजि.नं.: 01/01/01/17654/07

कार्यालय : एम-8/4 गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल फोन : 0755-4902433

सम्पर्क सूत्र :

महामंत्री	संयुक्त सचिव	कोषाध्यक्ष	उपाध्यक्ष	अध्यक्ष
राजेन्द्र जैन	**अरविन्द जैन,** सागर	**पवन जैन**	**राजेश जैन 'रज्जन'**	**इंजी. महेन्द्र जैन,** दमोह
9425140653	9893178458	9826240876	9425095917	9425601832

सदस्य -डॉ. अजित जैन, डॉ. सुधीर जैन

संरक्षक : श्रीमती जैन शीलरानी नायक, पनागर • श्री सुनील कुमार जैन एवं श्री महावीर प्रसाद जैन-सतना • श्री राजेन्द्र जैन कल्लन, दमोह • श्रीमति जैन नीतिका एवं हर्ष कोछल्ल , हैदराबाद • **सदस्य : जयपुर :** श्री जैन शांतिलाल बागड़िया।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः
शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः।

सत्पथ-दर्पण

गतांक से आगे.....

स्व. पं. अजित कुमार शास्त्री
(पूर्व जैनगजट संपादक)

इक्कीसवीं वार्ता

महाव्रतों से संवर भी होता है

आत्म-शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके अपने आत्म को पूर्ण शुद्ध निरञ्जन, निर्विकार, अजर, अमर, अजन्मा, सर्वज्ञ, वीतराग परमात्मा बनाने वाले जगत्पूज्य महत्तम (सर्व श्रेष्ठ) व्यक्ति को जिनेन्द्र कहते हैं। उस जिनेन्द्र भगवान की उपासना करने वाले स्त्री पुरुष 'जैन' कहलाते हैं।

सांसारिक विषय वासनाओं से विरक्त होकर जिनेन्द्र भगवान के मार्ग का निर्ग्रन्थ (परिग्रह रहित) तपस्वी के रूप में अनुचरण करने वाले 'जैन गुरु' होते हैं। जिनेन्द्र भगवान की वाणी के अनुसार ऋषि मुनि आचार्यों द्वारा लिखे गये प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग रूप ग्रन्थ 'जिनवाणी' कहे जाते हैं।

जो व्यक्ति जिनेन्द्र देव, निर्ग्रन्थ गुरु और जिनवाणी पर शुद्ध अटल श्रद्धा रख कर उनकी उपासना करता है, वह 'जैन' कहलाता है। शास्त्रीय भाषा में उसको 'सम्यग्दृष्टि' कहते हैं। श्री समन्तभद्र आचार्य ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में धर्म और धर्मात्मा का लक्षण निर्देश करते हुए लिखा है-

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि, धर्म धर्मेश्वरा विदुः।
यदीयप्रत्यनीकानि, भवन्ति भवपद्धतिः॥3॥

अर्थ- सत्श्रद्धा, सत् ज्ञान और सत् चारित्र 'धर्म' है। इनसे विपरीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र धर्म नहीं होते, वे संसार में भ्रमण कराने वाले हैं।

सम्यग्दर्शन का लक्षण संक्षेप से बतलाते हुए लिखा है-

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम्।
त्रिमूढापोढमष्टांग, सम्यग्दर्शनमस्मयम्॥4॥

अर्थ-परम आदर्श जिनेन्द्र देव, जिनवाणी और निर्ग्रन्थ तपस्वी का निर्दोष (त्रिमूढ़तादि 25 दोष रहित तथा अष्ट अंग सहित) श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।

इस लक्षण के अनुसार जो स्त्री पुरुष कुदेव, कुशास्त्र, कुगुरु की श्रद्धा, उपासना का परित्याग करके श्री जिनेन्द्र देव, जिनवाणी और निर्ग्रन्थ गुरु को अपना आराध्य, उपास्य, श्रद्धेय, पूज्य देव, शास्त्र, गुरु अन्तरंग बहिरंग से मानता है, वह सम्यग्दृष्टि है। वह अपने आपको जिनेन्द्र भगवान के समान शुद्ध परमात्मा बनने के पवित्र उद्देश्य से जैन धर्म का आराधक बनता है।

श्रद्धा और ज्ञान का तब तक कुछ विशेष मूल्य नहीं, जब तक कि आत्म-शुद्धि के लिए क्रियात्मक पग

न उठाया जावे। तदनुसार पतन कराने वाली प्रवृत्तियों-पाप, दुराचार, दुर्व्यसनों से यथा सम्भव निवृत्ति होना एवं अपनी शक्ति-अनुसार व्रत, तप, त्याग, संयम को ग्रहण करना जैन का कर्त्तव्य है, एवं मनुष्यभव का उपादेय तत्त्व है।

धर्माचरण का फल

जिस समय कोई व्यक्ति शुद्ध हृदय से सत् देव, गुरु, शास्त्र का उपासक बन कर कुगुरु, कुदेव, कुधर्म की श्रद्धा का परित्याग करता है तब से ही वह संसार-पथ से विमुख होकर मुक्ति-पथ पर चल पड़ता है।

उसकी उग्र प्रवृत्ति से संसार-भ्रमण के मूल कारण मिथ्यात्व, नरक आयु आदि 16 कर्म प्रकृतियों का संवर हो जाता है और असंख्यात गुणी अविपाक (बिना फल दिये) कर्म-निर्जरा पहले अन्तर्मुहूर्त में होती है तथा अपनी राग-प्रवृत्ति के कारण उसके अनेक शुभ कर्मों का आस्रव होने लगता है।

वही सम्यग्दृष्टि जब गृहस्थाश्रम में रहता हुआ अपनीशक्ति अनुसार अणुव्रती चारित्र (ग्यारह प्रतिमाओं में से किसी प्रतिमा) को ग्रहण करके और अधिक उच्च प्रवृत्ति मार्ग पर प्रगति करता है, तब उसके पाँचवां गुणस्थान होता है। उसके उस चारित्र-वृद्धि के कारण चौथे गुणस्थान के असंयत सम्यग्दृष्टि से भी असंख्यातगुणी कर्म-निर्जरा प्रतिसमय होती है तथा अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया लोभ, वज्रर्षभ नाराच संहनन, औदारिक शरीर, औदारिक अंगोपांग, मनुष्यगति, मनुष्य गत्यानुपूर्वी और मनुष्य आयु इन दश कर्म प्रकृतियों का संवर होता है। यानी इनका आस्रव-बन्ध होना रुक जाता है एवं पहले से भी अच्छा एवं शुभ कर्म-आस्रव शुभ कर्मबन्ध होता है। जिसमें स्थिति हीन और अनुभाग अधिक होता है।

जब कोई भव्य पुरुष संसार से विरक्त होकर, गृहस्थाश्रम से बाहर निकल कर अव्रतों (हिंसा आदि पाँच पापों) का पूर्ण परित्याग करके मुनि दीक्षा ग्रहण करता है, तब उसके महाव्रती सकल चारित्र होता है।

महाव्रतों के विषय में श्री शुभचन्द्र आचार्य ज्ञानार्णव ग्रन्थ में लिखते हैं-

महात्त्वहेतोर्गुणिभिः श्रितानि महान्ति मत्वा त्रिदशैर्नुतानि।
महासुखज्ञाननिबन्धनानि, महाव्रतानीति सतां मतानि॥181॥

अर्थ- महत्त्व के कारण होने से गुणी पुरुष महाव्रतों का आश्रय लेते हैं, यानी- महाव्रत आचरण करते हैं। देवगण भी महाव्रतों (महाव्रती मुनियों को) को महान (महत्वशाली) समझ कर नमस्कार करते हैं। सन्त जन महाव्रतों को महान सुख और महान ज्ञान का कारण मानते हैं।

आचरितानि महाद्भिर्यच्च महान्तं प्रसाध्यन्त्यर्थम्।
स्वयमपि महान्ति यस्मात् महाव्रतानीत्यतस्तानि॥पृ. 188॥

अर्थ- तीर्थङ्कर आदि मुक्तिगामी महान पुरुष इनका आचरण करते हैं, महान अर्थ (मोक्ष पुरुषार्थ) को ये सिद्ध करते हैं, स्वयं भी ये महान हैं, अतः महाव्रती कहलाते हैं।

निर्ग्रन्थ महाव्रती मुनि के जिनेन्द्र देव की वन्दना, स्तुति करते समय, प्रतिक्रमण, शास्त्र-स्वाध्याय, शास्त्र-रचना करते समय तथा भोजन-चर्या, शयन, विहार करते समय और धर्म-ध्यान करते समय छठा,

सातवां गुणस्थान होता है।

छठे गुणस्थान में पाँचवे गुणस्थान से भी असंख्यातगुणी कर्म निर्जरा प्रति समय होती है तथा प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ का संवर होता है। एवं राग भाव के तथा संज्वलन कषाय के सद्भाव के कारण शुभ कर्म आस्रव, शुभ कर्म-बन्ध भी होता है। सातवें गुण-स्थान में असाता वेदनीय, अस्थिर, अशुभ, अयशकीर्ति, अरति और शोक इन छह कर्म प्रकृतियों का संवर तथा छठे गुणस्थान से असंख्यात गुणी कर्म-निर्जरा होती है एवं संज्वलन कषाय तथा नो-कषायों के कारण कर्मबन्ध भी हुआ करता है।

व्रती के संवर होने का शास्त्री प्रमाण

गुणस्थानों में कर्म संवर को बतलाने के लिए गोम्मटसार कर्म-काण्ड की निम्नलिखित गाथा है-

सोलस पणवीस णभं दस चउ छक्केक्क बंधवोछिण्णा।

दुग तीस चदुरपुव्वे पण सोलह जोगिणो एक्को॥94॥

अर्थ- पहले गुणस्थान में मिथ्यात्व आदि 16 कर्म प्रकृतियों की बन्ध-व्युच्छित्ति होती है अर्थात् उससे ऊपर के गुणस्थानों में इन 16 प्रकृतियों का संवर होता है। दूसरे गुणस्थान में अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ आदि 25 कर्म प्रकृतियों की बन्ध-व्युच्छित्ति हो जाती है यानी-25 कर्म प्रकृतियों की बन्ध-व्युच्छित्ति हो जाती है यानी-25 प्रकृतियों का भी आगे के गुणस्थानों में संवर होता है। तीसरे गुणस्थान में किसी प्रकृति की बन्ध-व्युच्छित्ति नहीं होती। तदनुसार चौथे गुणस्थान में पहले दूसरे गुणस्थान की बन्ध-व्युच्छित्ति वाली 16 + 25 = 41 प्रकृतियों का संवर होता है। चौथे गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण क्रोध आदि 10 प्रकृतियों की बंध-व्युच्छिति होती है, उनका आगे के गुणस्थान में आस्रव बन्ध नहीं होता, इसलिए अणुव्रत चारित्र वाले पाँचवें गुणस्थान में 41 + 10 =51 इक्यावन प्रकृतियों का संवर होता है। पाँचवें गुणस्थान में प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ की बन्ध-व्युच्छित्ति होती है, अत: महाव्रत चारित्र वाले छठे गुणस्थान में 51 + 4 = 55 पचपन प्रकृतियों का संवर होता है।

इसके आगे के गुणस्थानों में (यानी-छठे से लेकर) क्रम से 6-1-36 (आठवें गुणस्थान के विभिन्न भागों में 2 + 30 + 4 = 36)-5-16-0-1 प्रकृति की बन्ध-व्युच्छित्ति होती है, उस प्रकृति का उससे ऊपर के गुणस्थान में संवर होता है। तीसरे और ग्यारहवें गुणस्थान में किसी कर्म प्रकृति की बंध-व्युच्छित्ति नहीं होती है, उस प्रकृति का उससे ऊपर के गुणस्थान में संवर होता है। तीसरे और ग्यारहवें गुणस्थान में किसी कर्म प्रकृति की बंध-व्युच्छित्ति नहीं होती तथा चौदहवें गुणस्थान में किसी भी कर्म का बन्ध नहीं होता।

तत्त्वार्थ सूत्र के नौवें अध्याय के दूसरे सूत्र में बताया है कि-

स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरिषहजयचारित्रैः॥2॥

अर्थ- वह संवर गुप्ति, समिति, क्षमादि धर्म, अनुप्रेक्षा, परिषहजय और चारित्र से होता है। अत: व्रत, गुप्ति, समिति, क्षमा आदि धर्म, 12 भावना, परिषह सहन, देशव्रत, सकलव्रत, सामायिक आदि व्यवहार चारित्र से कर्मों का संवर होता है।

निर्जरा

जय धवल में श्री वीरसेन आचार्य लिखते हैं-

घडियजालं व कम्मे अणुसमयअसंखगुणिय सेढीए।

णिज्जरमाणे संते वि महव्वईणं कुदो पावं ॥60॥[पुस्तक 1 पृष्ठ 107]

अर्थ-जब महाव्रतियों के प्रति-समय घटिका यंत्र के जल के समान असंख्यात गुणित श्रेणी रूप से कर्मों की निर्जर होती रहती है, तब उनके पाप कैसे संभव है।

इन शास्त्री सिद्धान्तों से यह बात निर्विवाद सिद्ध होती है कि सम्यग्दृष्टि जितनी कर्म निर्जरा करता है उससे असंख्यात गुणी कर्म-निर्जरा तथा सम्यग्दृष्टि से अधिक कर्मों (51 प्रकृतियों) का संवर अणुव्रत पालन करने वाला श्रावक करता है।

अणुव्रती श्रावक से भी असंख्यातगुणी कर्म-निर्जरा तथा अधिक कर्मों का (55 कर्म प्रकृतियों का) संवर महाव्रती मुनि के होता है।

अत: कहानपंथ सिद्धान्त की यह मान्यता गलत है कि-

'अणुव्रत, महाव्रत शुभास्रव के कारण हैं, उनसे संवर और निर्जरा नहीं होती।'

श्री पं. वंशीधर जी कलकत्ता पक्षधर गोम्मटसार कर्मकाण्ड तथा तत्त्वार्थ सूत्र का अध्ययन, मनन करके अपना भ्रम दूर करें। वहाँ कर्मबन्ध क्यों होता है? इस प्रश्न का उत्तर समयसार में दिया है।

सम्यग्ज्ञानी के बन्ध

रत्नत्रय की अपूर्ण अवस्था में सम्यग्दृष्टि, सम्यग्ज्ञानी के कर्म-बन्ध होता ही है। श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने समयसार में कहा है-

दंसणणाणचरित्तं जं परिणमदे जहण्णभावेण।

णाणी तेण दु बज्झदि पुग्गलकम्मेण विविहेण ॥172॥

अर्थ-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र जो जघन्य भाव से (अपूर्ण रूप से) परिणमन करते हैं, उससे सम्यग्ज्ञानी अनेक प्रकार के पौद्गलिक कर्मों से बंधा करता है।

टीकाकार श्री अमृतचन्द्र सूरि ने भी टीका में यही भाव व्यक्त किया है। इससे पहली 171 वीं गाथा की टीका में सूरि जी लिखते हैं-

'ज्ञानगुणस्य हि यावज्जघन्यो भाव: तावत् तस्यान्तमुहूर्त्तविपरिणामित्वात् पुन: पुनरन्यतयास्ति परिणाम:। स तु यथाख्यातचारत्रिावस्थाया अधस्तावदवशयं भाविरागसदूभावत् बन्धहेतुरेव स्यात्।'

अर्थ- जब तक ज्ञानगुण का जघन्य परिणमन होता है तब तक वह अन्तर्मूहूर्त्त में विपरिणामी होने से उसका बार-बार अन्य रूप से परिणमन होता रहता है। ज्ञान का वह जघन्य परिणमन यथाख्यात चारित्र की अवस्था (12 वें गुणस्थान) से नीचे सराग भाव अवश्य होने से कर्म-बन्ध का कारण ही होता है।

श्री कहान भाई क्रमबद्ध पर्याय का सिद्धान्त सिद्ध करने के लिए जिस स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षा ग्रन्थ

का प्रमाण देते हैं, उस कार्तिकेयानुप्रेक्षा ग्रन्थ में लिखा है-

सम्मत्तं देसवयं महव्वयं तह जाओ कसायाणं।
एदे संवरणामा जोगाभावो तहा चेव॥ 65॥
गुत्ती समिदी धम्मो अणुवेक्खा तह परिसहजओ वि।
उक्किट्ठं चारित्तं संवरहेतू विसेसेण॥ 96॥

अर्थ- सम्यक्त्व, देशव्रत (अणुव्रत), महाव्रत, कषायों का जीतना तथा योगों का अभाव, ये संवर के नाम हैं। गुप्ति, समिति, क्षमा आदि धर्म, अनुप्रेक्षा, परिषह जय और उत्कृष्ट चारित्र, ये विशेष रूप से संवर के कारण हैं।

निश्चय व्यवहार सम्यक्त्व

सम्यग्दर्शन हो जाने पर भी जो कर्मों का आस्रव और बन्ध होता है उसका कारण असंयत भाव है। चारित्र मोहनीय के उदय रहने से असंयत सम्यग्दृष्टि का सम्यक्त्व सराग-सम्यक्त्व होता है, अत: उसे व्यवहार सम्यक्त्व कहते हैं।

जब चारित्र मोहनीय कर्म का पूर्ण अभाव हो जाता है तब सराग भाव मिट जाने से यानी- वीतराग भाव हो जाने से वह सम्यक्त्व वीतराग का निश्चय सम्यक्त्व कहलाता है। श्री पूज्यपाद आचार्य ने तत्त्वार्थ सूत्र प्रथम अध्याय के दूसरे सूत्र की व्याख्या करते हुए लिखा है-

तत् द्विविधं सराग-वीतराग-विषयभेदात्। प्रशमसंवेगानुकम्पास्तिक्याभिव्यक्तिलक्षणं प्रथमम्। आत्मविशुद्धिमात्रमितरत्।

अर्थ- वह सम्यग्दर्शन दो प्रकार का है- सराग सम्यक्त्व, वीतराग सम्यक्त्व। प्रशम, संवेग, अनुकम्पा और आस्तिक्य भाव प्रगट करने वाला, सराग व्यक्ति का सम्यक्त्व 'सराग-सम्यक्त्व' है और मोहनीय कर्म के अस्त हो जाने पर आत्मा की विशुद्धि वाले व्यक्ति का सम्यक्त्व 'वीतराग सम्यक्त्व' है।

राजवार्तिक अ. 1 सूत्र 2 वार्तिक 31 में क्षायिक सम्यक्त्व को वीतराग सम्यक्त्व कहा है।

समयसार गाथा 13 की उत्थानिका में लिखा है-

'निश्चयनयेन निश्चयचारित्राविनभावि निश्चयसम्यक्त्व वीतरागसम्यक्त्व' भण्यते।

द्रव्य संग्रह की 41 वीं गाथा की टीका में लिखा है-

एव मुक्तप्रकारेण मूढत्रयमदाष्टक-षडनायतनशंकाद्यष्टमलरहितं शुद्ध जीवादितत्त्वार्थ-श्रद्धानलक्षणं सरागसम्यक्त्वाभिधानं व्यवहार सम्यक्त्वं विज्ञेयम्। तथैव तेनैव सम्यक्त्वेन पारम्पर्येण साध्यं शुद्धोपयोग-लक्षणं निश्चयरत्नत्रयभावनोत्पन्नपरमाल्हा-दैकरूप-सुखामृत-रसास्वादनमेवोपादेयमिन्द्रियसुखादिकं च हेयमिति रुचिरूप वीतरागचारित्राविनाभूतं वीतराग सम्यक्त्वाभिधानं निश्चयसम्यक्त्व च ज्ञातव्यमिति।...... व्यवहारसम्यक्त्वेन निश्चयसम्यक्त्वं साध्यते।

अर्थ- इस तरह 3 मूढ़ता, 8 मद, 6 अनायतन और 8 शंका आदि दोषरहित शुद्ध जीव आदि तत्त्वार्थों के

श्रद्धान सराग सम्यक्त्व नामक व्यवहार सम्यक्त्व जानना चाहिये। उसी प्रकार उसी व्यवहार सम्यक्त्व के द्वारा परंम्परा से (गुणस्थान-क्रम से) साधने योग्य शुद्ध उपयोग लक्षण वाले, निश्चय रत्नत्रय की भावना से उत्पन्न, परम सुख आदिक हेय है, ऐसी रुचि-रूप तथा वीतराग चारित्र के बिना न होने वालो (अविनाभावी) ''वीतराग सम्यक्त्व'' नामक ''निश्चय सम्यक्त्व'' जानना चाहिये।

अत: कहानपंथ के नेता निश्चयसम्यक्त्व को जो चौथे आदि सराग गुणस्थान में बतलाते हैं, वह भ्रम उन्हें इन शास्त्रीय प्रमाणों को देखकर दूर कर देना चाहिये।

निश्चय सम्यक्त्व, चारित्र मोहनीय का क्षय हो जाने पर बारहवें आदि गुणस्थानों में होता है, उससे पहले राग-अवस्था में वह नहीं होता।

तभी तो

क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी श्रेणिक राजा ने राग-उदय से शारीरिक पीड़ा से बचने के लिए आत्म-हत्या करके अपना प्राणान्त किया।

बन्ध का कारण

जिस प्रकार तत्त्वार्थ सूत्र के छठे अध्याय 21 वें सूत्र 'सम्यक्त्वं च' में सम्यग्दर्शन को देवायु के आस्रव का कारण बतलाया है और नौवें अध्याय के 45 वें सूत्र 'सम्यग्दृष्टि-श्रावक' आदि में सम्यग्दर्शन को निर्जरा का कारण बतलाया है उसी प्रकार तत्त्वार्थ सूत्र के नौवें अध्याय में जहाँ व्यवहार चारित्र-समिति आदि से कर्म-संवर होना बतलाया है, उसी तत्त्वार्थ सूत्र के छठे अध्याय में अणुव्रत महाव्रत को पुण्य कर्मास्रव का भी कारण कहा है। इसका अभिप्राय यह है कि-

व्यवहार (सराग) सम्यक्त्व और व्यवहार (सराग) चारित्र के हो जाने पर सम्यक्त्व तथा चारित्र के साथ राग-परिणाम भी होते हैं। यानी- चौथे गुणस्थान में सम्यक्त्व और राग के मिश्रित भाव तथा पाँचवें छठे गुणस्थान के अणुव्रती महाव्रती चारित्र के साथ रागमिश्रित भाव होते हैं, अत एवं उसे सराग सम्यक्त्व अंश से बन्ध नहीं होता उससे तो संवर और निर्जरा ही होती है किन्तु राग-अंश से कर्म-बन्ध होता है। जैसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि श्रेणिक राजा के अन्त समय बन्ध-कारक आत्म-हत्या की भावना हुई और उस भावना से उसने आत्म-हत्या कर भी डाली।

इसी तरह संसार, शरीर, विषय भोग एवं पाप, दुर्व्यसन, अदया से विरक्ति या निवृत्ति रूप व्रतात्मक चारित्र-अंश से तो संवर निर्जरा ही होती है, कर्म-बन्ध नहीं होता किन्तु उसके साथ जो संज्वलन क्रोध लोभ आदि एवं रति अरति आदि नो-कषाय का सराग भाव होता है, उससे कर्म का आस्रव और बन्ध भी होता है। जैसा कि श्री पं. टोडरमल जी ने मोक्षमार्ग प्रकाश में पृष्ठ 334 तथा पृष्ठ 340 पर लिखा है। तथाच-इसी कर्मबन्ध होने, न होने का विवरण भी श्री अमृतचन्द्र सूरि ने पुरुषार्थ-सिद्धि-उपाय ग्रन्थ के 212-213-214 में श्लोकों में स्पष्ट बतलाया है, जिसे इसी पुस्तक में पृष्ठ 35-36 पर लिख चुके हैं।

इस 21 वें कथन में जो 9 शास्त्रीय आधार दिये हैं उनका उत्तर 6वीं वार्ता में दे चुके हैं, अत: उनको यहाँ फिर नहीं लिखा है।

निरंतर.......

दया-भाव के अभाव में आँखों का पानी सूख जाता है। योग से ज्यादा महत्वपूर्ण प्रयोग होता है।

आचार्यश्री विद्यासागरजी

चंद्रगिरि डोंगरगढ़ में विराजमान संत शिरोमणि 108 आचार्यश्री विद्यासागर महाराज जी ने एक दृष्टान्त के माध्यम से बताया की अड़ोस-पड़ोस में दो किसान रहते थे उनके पास सैकड़ों एकड़ जमीन थी लेकिन उस जगह दूर-दूर तक पानी नहीं होने के कारण उनकी आँखों में पानी था। एक दिन एक किसान एक व्यक्ति को लेकर आता है और अपनी जमीन दिखाता है फिर जमीन देखने के बाद वह उचित स्थान पर खुदाई कराकर कुवां बनाता है जिससे पानी लेकर किसान भगवान् का अभिषेक करता है और अपनी खेती किसानी में लग जाता है। इसे देखकर पड़ोसी दूसरा किसान भी अपनी जमीन पर कुवां खुदवाता है और उसमें जल की मात्रा पहले वाले किसान से अधिक होती है। दूसरे किसान के कुवें में जल की मात्रा अधिक होने के कारण पहले किसान को इर्ष्या के कारण उसके भाव बिगड़ जोते हैं और वर्षा काल में उसके कुवें का पानी और कम होने लगता है और धीरे-धीरे उसका कुवां पूरा सूख जाता है जबकि दूसरे किसान का कुवां और लबालब भर जाता है। आचार्यश्री कहते हैं कि आज कल पानी भी बोतलों में बिकता है जिसका दाम 15 से 20 रुपये प्रति लीटर है जबकि प्रकृति में जल, मिट्टी और वायु (ऑक्सीजन) नि:शुल्क उपलब्ध है। आज लोग गांवों से जल, मिट्टी और वायु (ऑक्सीजन) को पैक कर शहर में बेचकर व्यापार कर रहे हैं जबकि चंद्रगिरी में जल, मिट्टी और वायु (ऑक्सीजन) नि:शुल्क उपलब्ध है। किसान खेती की जगह व्यापार एवं पैसे की ओर बढ़ रहा है। मनुष्य में दया एवं करुणा का अभाव होता जा रहा है और हर बीज का दाम लगाकर उसे बेचा जा रहा है। सरस्वती और लक्ष्मी दोनों को बहनें कहा जाता है जिसके पास ये दोनों हैं मतलब उसकी बुद्धि ठीक है और जिसके पास लक्ष्मी है लेकिन सरस्वती नहीं है तो वह लक्ष्मी उसके पास ज्यादा दिन नहीं रहेगी और जिसके पास दोनों नहीं हैं मतलब उसको पुरुषार्थ की आवश्यकता है तभी कुछ हो पायेगा। योग से ज्यादा प्रयोग को महत्वपूर्ण माना गया है। अगर आपका योग अच्छा है आपको कोई चीज मिल भी जाती है परन्तु आपको उसका उपयोग या प्रयोग नहीं मालूम है तो वह चीज आपके कोई काम की नहीं होगी। पहला किसान दूसरे किसान के पास जाता है और कहता है कि तुमने सुरंग बनाकर मेरे कुवें के जल को अपने कुवें में ट्रान्सफर कर लिया है जबकि उस समय तो बोरवेल-पंप आदि नहीं होते थे तो ऐसा कर लिया है जबकि उस समय तो बोरवेल-पंप आदि नहीं होते थे तो ऐसा करना असंभव था। पहले किसान की इर्ष्या के कारण बुद्धि भ्रष्ट हो गयी थी। आज संयम की कमी के कारण भी लोग पथ भ्रष्ट हो जाते हैं और पाप कर्म का बन्ध करने लगते हैं। अच्छे कर्म से बुरे कर्म की निर्जरा होती है और अच्छे कर्म दया-करुणा भाव से करते रहना चाहिए जिससे पुण्य बढ़ता रहे।

Nishant Jain, I.C.E.Computer Education Jain Internet Cafe, Computer Sales & Services, Railway Chowk, Dongargarh. 09301301540

कैदियों को सिखाया धर्म का पाठ

प्रवचनकार-आचार्यश्री आर्जवसागरजी

लेखन प्रस्तुति-संघस्थ मुनिश्री नमितसागर महाराज

ॐ नम: सिद्धेभ्य:...............

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्द कुन्दार्यो, जैन धर्मास्तु मंगलं॥

भगवान महावीर का 2616 को जन्म जयंती दिवस के उपलक्ष्य में साप्ताहिक कार्यक्रम आयोजन के अन्तर्गत आज प्रथम दिवस पर आचार्यश्री आर्जवसागरजी ने केन्द्रीय जेल-दमोह में वहाँ के बन्दियों को महावीर के संदेशों को प्रवचन के माध्यम से दिया।

कैदी बन्धुओं! आप लोग यहाँ पर हैं यह जेल नहीं है वरन् वह आपको प्रायश्चित्त स्वरूप यह शिक्षा देने की शाला है। व्यक्ति गलती तो करता है, यहाँ उस गलती को सुधारने का एक शिक्षा केन्द्र है। आप लोगों को अपनी गलती का ध्यान तो आता ही होगा। हाँ, यहाँ आपको जैसी चाहो वैसी स्वतंत्रता तो नहीं है लेकिन यहाँ रहकर आगे आने वाले कल का माहौल तैयार कर रहे हो। आप लोग प्रतिदिन अपने-2 इष्ट देवता को याद करते होंगे- परिवार के दादा-दादी को भी याद करते होंगे। यहाँ आप लोगों को जेलर साहब एक अच्छा वातावरण देते होंगे जिससे आप अपने आगे के जीवन को सुधार सकें। किसी परिस्थिति वश कीचड़ में फिसल गये होंगे और उसके फलस्वरूप यहाँ आना पड़ा।

आज से करीब 2600 वर्ष पूर्व भगवान महावीर का जन्म हुआ था उस समय भारत की स्थिति बहुत ही नाजुक थी समाज में अति हिंसा का वातावरण था। बहुत बड़े-बड़े यज्ञ हो रहे थे जिसमें घोड़े आदि जानवरों की बलि दी जाती थी। यहाँ तक मनुष्यों को भी धर्म के नाम पर उस में जिंदा जला दिया जाता था। कहते हैं जब भी समाज में कोई अति होती है तो उसको मिटाने के लिए महापुरुष जन्म लेते हैं। आज से 2616 वर्ष पूर्व भ. महावीर का जन्म हुआ, उनके जन्म से पन्द्रह माह पूर्व से ही अनेक अतिशय पूर्ण घटना होने लगीं, प्रतिदिन 14 करोड़ रत्नों की वर्षा होती थी। जहाँ भगवान का जन्म होना निश्चित था वहाँ की जनता/प्रजा धन-धान्य से सुखी हो गयी थी। कोई भी गरीब नहीं बचा था तो वहीं भगवान महावीर का जन्म होने से पहले हिंसक वातावरण खत्म हो गया था। भगवान महावीर को पाँच नामों से जाना जाता है जो उनके जीवन शैली पर आधारित है। भगवान महावीर ने शादी नहीं की, उनके जीवन काल में कोई गरीब नहीं दिखा। देवता स्वर्ग से आकर उनके भोजन-वस्त्र आदि की व्यवस्था करते थे। उन्होंने लोगों के कल्याण के लिये अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का संदेश दिया। आज हम आचार्य परम्परा से पालन करते हुये भव्य जीवों के कल्याण के लिये उपदेश देते हैं। आप लोगों ने महात्मा गांधी का नाम तो सुना ही होगा जिन्हें आज राष्ट्रपिता के नाम से जानते हैं। उन्होंने भारत को स्वतंत्रता इस अहिंसा के सिद्धान्त पर ही अंग्रेजों से दिलवायी। भारत के पूर्व राष्ट्रपति श्री अब्दुल कलाम से किसी ने प्रश्न किया कि वर्तमान में ऐसा कौन सा मिसाइल है जिससे विश्व में शांति स्थापित हो सके। तो उनका उत्तर था अहिंसा ही ऐसी मिसाइल जिससे शांति की स्थापना हो सकती है। कोई हमसे पूछे

कि महाराजजी आप ऐसे कैसे रहते हैं? तो आप जानेंगे यह रूप अहिंसा महाव्रत को पालन के लिये है। यदि हम एक लंगोटी भी लगा लें तो उसकी सुरक्षा के लिये अनेक चिंतायें चालू हो जायेंगी, हम लोगों के जीवन में पाप रूपी विकारों का प्रवेश नहीं है। आप लोगों को मालूम होगा कि महात्मा गांधी एक धोती पहनते थे। उनके पास तो बहुत सारे कपड़े थे उन्होंने अफ्रीका से वकालत की शिक्षा प्राप्त की थी। जब वो भारत वापिस लौटे तो माँ ने पहले घर में प्रवेश नहीं दिया यह कह कर कि कहीं तुमने माँस भक्षण तो नहीं किया? उनके साथ आने वाले व्यक्ति ने उत्तर दिया, नहीं माँ, उन्होंने तो उपवास किया लेकिन माँस भक्षण नहीं किया, तब घर में प्रवेश दिया। एक बार गांधीजी एक तालाब के पास से गुजर रहे थे। उन्होंने देखा कि महिला आधी साड़ी पहने हुये है और आधी धोकर सुखा रहीं है यह देख वो वहीं खड़े रहे जब तक दूसरी आधी साड़ी धुल गई और उसको पहन ली। फिर नजदीक पहुँचते हुए उस पहिला से पूछा कि आप ऐसा क्यों कर रही थीं, क्या दूसरी साड़ी नहीं है? तो उस का उत्तर यही था कि दूसरी साड़ी होती तो मैं ऐसा क्यों करती। उस दिन से उन्होंने संकल्प लिया कि वो भी सिर्फ एक धोती पहनेंगे वो भी स्वयं की बुनी हुई। विचार करो महात्मा गांधी एक धोती में काम चला सकते हैं तो हम भी क्या कम वस्त्रों में निर्वाह नहीं कर सकते हैं? ज्यादा परिग्रह में आत्म शान्ति नहीं मिलती है। मनुष्य ध्यान भी नहीं कर सकता है और ध्यान किये बिना संसार रूपी जेल से निकलने के लिये कर्मों का क्षय नहीं कर सकता, चित्त की एकाग्रता के लिये हिंसा आदि पाँच पापों का त्याग करना पड़ता है। तब कहीं जाकर हम जो अनादि से इस संसार में रहकर पाप कर रहे हैं उनको काटकर इस जेल से छूट पायेंगे। तो बन्धुओं आपने कुछ ऐसे कर्म किये होंगे जिस कारण यहाँ आना हुआ। पूर्व में किये गये पाप-पुण्य कर्म कभी किसी को बिना कुछ फल दिये छोड़ते नहीं हैं। तो घोर तपस्या से पाँच महाव्रतों को पालन करते हुए पूर्व में उपार्जित कर्मों का क्षय किया जा सकता है। इसको हम एक उदाहरण से जानेंगे। एक माँ के दो पुत्र हुए, एक स्वस्थ-सुन्दर और बुद्धिमान है और दूसरा पुत्र अपंग है और मंद बुद्धि वाला है। विचार करो ऐसा क्यों होता है? यह सब अपने-अपने कर्मों का फल है पूर्व जन्म में हिंसा आदि पाँच पाप किये होंगे जिस कारण से वह अपंग-मंदबुद्धि वाला हुआ और दूसरे बेटे ने पुण्य के प्रभाव से सुंदर शरीर पाया है। इस तरह पूर्व कर्मों में आस्था रखो तब कहीं मन को शान्ति-संतोष होगा जो हमें वर्तमान में बुरे कार्य करने से रोके रखेगा। हिंसा वह है जो बेकसूर को अपने स्वार्थ के लिये उसको जान से खत्म करना अथवा बेकसूर से अपना मतलब सिद्ध करने के लिये राग-द्वेष उत्पन्न करना। उदाहरण के लिये सीता का अपहरण रावण ने किया और राम ने रावण का वध करके सीता को छुड़ाया। देश की सुरक्षा के लिये सीमा पर मिलट्री तैनात है। इसमें स्वार्थ नहीं है बल्कि धर्म की और रक्षा की भावना छिपी है। जैन धर्म में हिंसा मूलत: दो प्रकार की कही है एक द्रव्य हिंसा दूसरी भाव हिंसा। आप लोग ध्यान दें द्रव्य हिंसा उसे कहते हैं जिसमें किसी का सीधा घात या मरण होता है और दूसरी भाव हिंसा जिसमें तुम्हारे कारण दूसरे व्यक्ति को दु:ख पीड़ा हो। दोनों से ही पाप कर्मों का बंध होता है और उसका फल समय आने पर भोगना ही होगा। जैन पुराणों में एक पुररुआ भील का उदाहरण मिलता है जिसमें हमें शिक्षा मिलती है कि किसी तरह जो कोई एक छोटा सा त्याग का संकल्प लेता हो तो उसका क्या फल मिलता है? वह भील जिसका काम तो हिंसा से ही पेट का भरण पोषण होता है। एक बार उसने दिगम्बर मुनि के प्रवचन सुने जो अहिंसा आदि पर चल रहे थे। प्रवचन खत्म होने

के बाद श्रोतागण अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार नियम ले रहे थे। वहाँ पर वह भी उपस्थित था, मुनि महाराज ने उसकी ओर भी इशारा किया कुछ नियम लेने के लिये कहा। उसने विनय पूर्वक कहा कि मैं क्या कर सकता हूँ? हमारा जीवन तो इसी में है। फिर भी संवाद के उपरान्त उसको कौवे के माँस त्याग करने के लिये कहा जिसे उसने सहज स्वीकार कर लिया क्योंकि ऐसा माँस तो उसने अब तक भक्षण नहीं किया था। फिर भी त्याग तो त्याग ही है। एक बार वह भील बीमार हो गया तो वैद्य ने उसे कौवे के मांस लेने के लिये कहा लेकिन उसका तो त्याग था। अपने संकल्प पर दृढ़ रहते हुए उसने अपने प्राण छोड़ दिये परिणाम स्वरूप वही भील का जीव स्वर्ग में देव हुआ। विचार करो कि छोटे से नियम का फल कितना अच्छा होता है। तो आप लोग भी अपने जीवन में इस तरह के विचारों को स्थान दें यह सबक लेते हुये कि गुणी योगी दर्शन से उसका जीवन ही बदल गया। आप लोगों के जीवन में ऐसा ही हो ऐसी मैं भावना भाता हूँ।

आप लोग व्यसन के बारे में तो जानते होंगे जो मनुष्य के जीवन को तवाह कर देता है। जैन धर्म में सात व्यसन बताये गये हैं। जैसे जुआ, चोरी, शिकार, माँस, शराब, पर स्त्री सेवन, वेश्या गमन..... अन्य और भी व्यसन सब इन्हीं सातों में समाहित हो जाते हैं। इस तरह प्रत्येक मानव को इन व्यसनों से दूर रहना चाहिये। इस को एक दृष्टांत के द्वारा समझाता हूँ। एक बार एक बालक एक योगी के दर्शन के लिये गया था। वहाँ श्रावकगण उन योगी महाराज से नियम ले रहे थे। इस बालक ने भी उन योगी से सप्त व्यसन के त्याग का नियम ले लिया और घर आकर अपने पिता से कह दिया कि मैंनें सप्त व्यसन त्याग का नियम ले लिया है। पिताजी यह सुन कर उस बालक पर कुपित हुए और कहने लगे कि जाओ यह नियम जिससे लिया है उसी के पास जाकर वापिस कर आओ। बालक भी प्रखर बुद्धि का था उसने पिताजी से कहा कि आप भी चलिये उन योगी के पास जिससे बड़ा अच्छा होगा। पिताजी ने कहा कि चलो हम चलते हैं। रास्ते में जाते हुए कुछ लोग जुआ खेल रहे थे, बालक ने पूछा पिताजी ये लोग क्या कर रहे हैं, पिताजी ने कहा- बेटा ये लोग जुआ खेल रहे हैं, तुम ऐसा मत करना इससे जीवन बरबाद हो जाता है। अरे पिताजी, मैने महाराज जी से यही नियम तो लिया है। चलो कोई बात नहीं तुम इस नियम को रख लो बाकी वापिस कर देना, बालक बोला ठीक है पिताजी। फिर आगे चले तो देखा एक व्यक्ति के हाथ पैर में हथकड़ी डली थी और कुछ व्यक्ति (पुलिस) उसको ले जा रहे थे, बालक ने पिताजी से पूछा कि इस आदमी को ऐसे क्यों ले जा रहें हैं। पिताजी ने कहा बेटा इसने चोरी की थी इसलिये इसके अपराध में पुलिस पकड़ कर ले जा रही है इसको बन्दी बना कर रखेंगे। पिताजी यही दूसरा नियम भी मैंने लिया है कि मैं कभी भी जीवन भर चोरी नहीं करूँगा। चलो- ठीक है, इस नियम को भी रख लो। अब फिर आगे बढ़े तो थोड़ी दूर पर देखा एक व्यक्ति तीर के निशाना बना कर मासूम जानवरों को मार रहा है, पुत्र ने पिता जी से प्रश्न किया कि यह क्या कर रहा है? उन्होंने उत्तर देते हुए कहा कि यह व्यक्ति मासूम जानवरों को मारकर उसके माँस का भक्षण करेगा हम लोग शाकाहारी हैं। हम किसी की हिंसा नहीं करते यह पाप है देखो घोड़ा होता है वह घास-चना आदि खाता है और उसकी शक्ति का ही उदाहरण देते हैं- क्या देते हैं- ''हॉर्स-पावर'' लायन पावर कभी नहीं कहते हैं क्योंकि वह माँसाहारी है जो मांसाहारी होते हैं उनके नाखून-दाँत नुकीले होते हैं और पानी जीभ से चप-2 करके पीते हैं। क्या हम लोग ऐसे हैं नहीं। हाँ बेटा ऐसा कभी मत करना। अरे! पिताजी योगी ने ऐसा ही

तो कहा था कि शिकार करना और माँस खाना पाप है वहीं तो मैंने नियम लिया है। अच्छा तो कोई बात नहीं ये नियम भी रख लो। फिर भी वे दोनों आगे योगी दर्शन के लिये चलते रहे बीच में देखा कि एक व्यक्ति गंदी नाली में पड़ा है और कुत्ता उसके ऊपर गंदगी कर रहा है। बेटे ने पिताजी से पूछा यह आदमी नाली में क्यों लेटा है? पिता ने कहा कि इसने शराब पी ली है और इसको बिलकुल होश नहीं है। यह जो भी कमाता है सब शराब में खर्च कर देता है इसके पत्नी-बच्चे परेशान रहते हैं, तुम से भी कह रहा हूँ, तुम शराब कभी मत पीना। बेटा कहता है हाँ- पिताजी मैं कभी शराब नहीं पीऊंगा और यही नियम मैंने योगी महाराज से लिया था। अच्छा चलो ये भी नियम रख लो। इसी तरह और आगे बढ़े तो देखा महिला की छेड़-छाड़ के कारण एक व्यक्ति को गरम लोहे की छड़ से उसके शरीर पर लोग निशान लगा रहे थे और वह बहुत रो-रो कर तड़प रहा था। बेटे ने पिताजी से पूछा इस आदमी को ये लोग क्यों परेशान कर रहे हैं? पिताजी ने कहा बेटा इस आदमी ने दूसरे की स्त्री से छेड़-छाड़ की और यह गंदी बात है। तुम इस तरह के कार्य मत करना, बेटा- हाँ पिताजी। यही नियम मैंने योगी से लिया था। हाँ कोई बात नहीं इसे रख लो। फिर आगे बढ़े तो देखा एक आदमी जो कभी बहुत बड़ा सेठ था आज फुटपाथ पर बैठा भीख मांग कर पेट भर रहा है। इसका कारण था वेश्यागमन। इससे आदमी अपना जीवन बर्बाद कर लेता है। बेटा तुम इस तरह की झंझट में नहीं पड़ना। अरे पिताजी! ये ही तो सप्त व्यसन त्याग का नियम मैंने योगी महाराज से लिया है। अच्छा बेटा! तुमने- मुझे पहले क्यों नहीं बताया? मैं तो बता ही रहा था लेकिन आपने मेरी पूरी बात सुनी ही नहीं। पिताजी बेटे से कहते हैं कि चलो बहुत अच्छा हुआ अब हम अपने घर वापिस चलते हैं और इन नियमों को जीवन भर अच्छे से पालन करना। हम जब जैन तीर्थ शिखरजी की यात्रा पर थे तो बनारस बीच में पड़ता है तो वहाँ के जैन जेलर ने जेल में प्रवचन देने के लिये कहा था लेकिन समयाभाव के कारण प्रोग्राम नहीं बना। उसी तरह, शीतकाल में बरेली में भी जेल में प्रवचन की चर्चा चली, बात नहीं बनी। आप लोगों का पुण्य है कि यह व्यवस्था बनी। आप लोग यहाँ पर हैं किसी कारणवश मानो कीचड़ में फिसल गये होंगे। अब तो आप लोग हमारी इस धर्म की कंपनी के सदस्य बन जाओ और अहिंसक मार्ग को अपनाओ जिससे आप लोगों का शेष जीवन सुधर जायेगा। बोलो व्यसनों का त्याग करोगे ना। उठाओ हाथ कौन हमारे विचारों से सहमत हैं, सभी ने दोनों हाथ उठाये। सभी को मेरा आशीर्वाद है। अब हम आपको एक सत्य घटना बताते हैं। किस तरह तंबाकू सेवन घातक है। इसमें निकोटिन होती है। जो तंबाकू सेवन करता है उसके शरीर में निकोटिन फैल जाती है। एक बार एक परिवार में तीन महीने के बच्चे का शरीर नीला पड़ गया घर के लोग डॉ. के पास भागे-भागे गये। डॉ. ने जब परीक्षण किया तो पाया अरे! इस बच्चे का शरीर निकोटिन के प्रभाव से नीला पड़ गया है। डॉ. ने पूछा कि क्या ऐसे व्यक्ति ने इसे लिया जो तम्बाकू का सेवन करता हो। वहीं इस बच्चे के दादाजी खड़े थे उन्होंने स्वीकार किया हाँ मैंने इस बच्चे को लिया था और मैं तम्बाकू खाता हूँ। बच्चा मुश्किल से बच पाया और उन व्यक्ति ने भी तम्बाकू जीवन भर के लिये छोड़ दी । आप लोग भी इसका सेवन नहीं करना। अब चोरी के लिये उदाहरण देता हूँ जो जैनागम से है, यह कहानी चौथे काल की है, एक चोर महल से हार चोरी कर भागा तो पुलिस ने देखा उसके पीछे भागी, चोर तो नहीं दिखा लेकिन हार चमक के कारण दिख रहा था। चोर ने सोचा अब सुबह होने वाली है पकड़े जायेंगे इसलिय हार फैंक दिया। और वह शमशान की ओर

भाग गया वहाँ देखा कि एक व्यक्ति पेड़ से ऊपर-नीचे हो रहा था। उसने पूछा कि क्या कर रहे हो? यहाँ, मैं आकाश गामिनी विद्या सिद्धि कर रहा हूँ। अच्छा! किसने बताई? जिनदत्त सेठ ने बताई है। अरे वो तो बड़े प्रसिद्ध सत्यवादी थे लाओ मैं सिद्ध करता हूँ बताओ कैसे क्या करना है? यहाँ सब व्यवस्था बनाई है इसमें 108 रस्सियाँ हैं, णमोकार मंत्र पढ़कर एक-एक रस्सी काटना है अंत मैं विद्या सिद्ध हो गई तो आप नीचे लगी हुई तलवारों के ऊपर गिरने से बच जाओगे। चोर ने सोचा वैसे भी पुलिस पकड़ने वाली है तो वैसे ही मारे जायेंगे इससे अच्छा यही काम करते हैं। तुरंत उस पर चढ़ा तब तक वहा मंत्र भूल गया। सिर्फ इतना ही याद रहा "आणं ताणं कछु न जानम् सेठ वचन परमाणं" इतना बोलते हुए सारी रस्सियाँ एक दम काट दीं और नीचे गिरने लगा बस इतने में विद्या ने उस चोर को अधर में उठा लिया और यह बोलते हुए कि आपने विद्या सिद्ध कर ली है। बतलाइये आपको क्या चाहिये। चोर ने कहा मुझे कुछ नहीं चाहिये जहाँ सेठजी है वहीं ले चलो। बस कुछ ही क्षणों में वहाँ से सुमेरु पर्वत पर पहुँच गया और सेठजी को सामने देखा तो "जय जिनेन्द्र" किया। सेठजी ने पूछा कौन हो तुम, कहाँ से आये हो? मैं अंजन चोर हूँ और आपके नगर से ही आया हूँ। यह विद्या कैसे मिली- बस आपका व्यक्ति था उसी से प्राप्त हुई। सेठजी ने विचार किया कि अब तो बहुत मुश्किल होगी बंदर के हाथों तलवार आ गई मानो, यह चोर अब क्या नहीं करेगा। इतने में वह सेठजी से निवेदन करता है कि मेरे लिये उपदेश दीजिये, मैं सब पापों का त्याग करना चाहता हूँ। सेठजी ने मुनिराज की ओर इशारा किया; उपदेश वहाँ मिलेगा। चोर तुरंत वहाँ पहुँचा और मुनिराज से अपने कल्याण के लिये निवेदन किया और दीक्षा लेकर कर्मों का क्षय करके संसार रूपी जेल से मुक्त हुआ। देखो अगले पल का भी भरोसा नहीं आप लोग भी अपने अच्छे व्यवहार से एक अच्छे मार्ग को अपना सकते हो।

अंत में मैं यही कहना चाहूँगा कि आप इन दीवारों के बन्धनों से छूटने की भावना भा रहे और हम इस संसार रूपी जेल से मुक्त होने की भावना भाते हुए पुरुषार्थ कर रहे हैं। जेलर साहब से कहना चाहूँगा कि इन बन्दियों को यहाँ पर व्यवस्था दी जाये ताकि ये यहाँ से बाहर निकलें तो एक अच्छा जीवन व्यतीत करते हुए अपने परिवार का भरण-पोषण कर सकें फिर पाप कर्म के मार्ग पर आने का विचार भी नहीं आये। इसलिये इन्हें योग-व्यायाम व धर्म का ज्ञान प्राप्त हो ऐसी व्यवस्था हो जाये तो इन भव्यों का कल्याण होगा। इस तरह जेलर ने अपनी स्वीकृति भी दी और भविष्य में आपके बताये इस मार्ग का ही अनुसरण करने की इन्हें प्रेरणा अवश्य देते रहेंगे। सभी कैदियों ने और सभा में आये लोगों ने हाथ उठाकर कि कभी भी सप्त व्यसन आदि बुरे कर्म नहीं करेंगे, ऐसा संकल्प लिया।

अंत में चार पंक्तियाँ बोलकर आचार्यश्री ने प्रवचन का समापन किया-

धर्म जैन हो या हिन्दू हो, चाहे हो सिख, ईसाई।
मुस्लिम, बौद्ध सभी में देखो, नहीं कहीं हिंसा भाई॥
सभी धर्म जो दया मूल है, उसकी बात बताते हैं।
नहीं मारना किसी जीव को, यही सबक सिखलाते हैं॥

॥ महावीर भगवान की जय॥

प्राचीन भारत के शून्य और अनन्त

प्रो. एल.सी. जैन, जबलपुर

हमारी महान मातृभूमि भारत ने हाल में ही आधुनिक गणित की सामान्य उपलब्धियों के साथ कदम रखे हैं, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के स्तरों पर। उनके गणित के पाठ्यक्रमों को राशि सैद्धान्तिक आधार दिया जा रहा है जिसके कारण हम लम्बे कदम भरते आज के यन्त्र-विज्ञान का सामना कर सकते हैं। राशि सिद्धान्त और इसके निकट सम्बन्धी सिद्धान्त आधुनिक सामाजिक और यान्त्रिक कलाओं और विज्ञानों के केन्द्र में स्थापित हो चुके हैं। तथापि प्राचीन भारत में इन सिद्धान्तों का अस्तित्त्व अभूतपूर्व गणितीय-तत्त्वज्ञानिक वार्तालापों के साधारण लक्षणों के रूप में देखने को मिलता है। ये वार्तालाप 'षट्खण्डागम' (ईसा की दूसरी सदी) (संक्षिप्त रूप एसकेजी); 'कषाय प्राभृत सूत्र' (ईसा की पहली सदी) (संक्षिप्त रूप केपीएस); 'गोम्मटसार जीवकाण्ड' (जी जे के संक्षिप्त रूप); 'गोम्मटसार कर्मकाण्ड' (संक्षिप्त रूप जीकेके); 'लब्धिसार' (संक्षिप्त रूप एलडीएस); तथा 'क्षपणासार' (संक्षिप्त रूप केएनएस) में उपलब्ध हैं। वार्तालापों के इन सारांशों के साथ उसके भाष्य भी दिए गये हैं और ये सब ग्रन्थ ईसा की दूसरी सदी से लेकर दसवीं सदी तक की कृतियाँ हैं। शून्य एवं अनन्त कर्मसिद्धान्त ग्रन्थ सागर में सामान्यत: प्रवाहित दिखायी देते हैं जो लगभग पाँचवीं सदी के 'तिलोयपण्णत्ती' एवं दसवीं सदी के 'त्रिलोकसार' पर आधारित रचित हुए प्रतीत होते हैं।

संख्याओं के साथ खेलना सरल काम था क्योंकि उनके माध्यम से मनुष्यों का संसारिक अर्थ व्यक्त होता था। शून्य से तात्पर्य था कुछ नहीं या कुछ की भी अनुपस्थिति। इसी प्रकार अनन्त एक अस्पष्ट विस्तार था, मात्रात्मक या गुणात्मक, जिसके क्षेत्र में अन्वेषण हेतु आदिकालीन तर्क और अन्तर्ज्ञान के सहारे यात्रा नहीं की जा सकती थी। संस्कृति के जागरण के साथ ही भारत ने आगे आकर अदृश्य और अनुत्तरति घटनाओं के उत्तर प्रस्तुत किये। इस देश ने जन्मों और पुनर्जन्मों के चक्रों को समझने की चनौती भी स्वीकार की, जिसने पाश्चात्य मस्तिष्क को पीढ़ियों तक परेशान किया। अजेय सत्य के गहनतम प्रदेशों में अन्वेषण करने के लिए इसने शून्यों और अनन्तों के गणितीय आधार पर दार्शनिक सिद्धान्तों का विकास किया। हमारे पूर्वजों ने 'आत्म' के प्रायोगिक वातावरण का पता लगाने का प्रयत्न किया। यह काम उन्होंने असाधारण और साधारण शून्यों और अनन्तों के गणितीय आधार को विकसित करके किया।

आरम्भ में ही यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि गणित की यह शाखा 'लोकोत्तर' कहलाती थी और इसमें आश्चर्य नहीं यदि इसके तात्पर्य और लक्ष्य से प्रेरित होकर संसार के गणितज्ञों ने विज्ञान के आरम्भ से आज तक संगत अवस्थाओं के प्रकृति के रहस्यों पर यादगार ग्रन्थों की रचना की।

लोकोत्तर गणित के इन कार्यों का लक्ष्य सम्भवतया इसके सारे परिप्रेक्ष्यों में अपनी ही आत्मा की उपलब्धियों को उद्घाटित करना था। आत्माओं और निरात्माओं के आसाधारण और साधारण गुणों से एक-से-एक संगति के सिद्धान्त का विकास हुआ, जिसने केवल एक प्रकार के नहीं वरन् अनेक प्रकार के स्थिर अनन्तों को दर्शाया होगा। भारतीयों को इतने से ही सन्तोष नहीं हुआ। वे विश्लेषण के कई उपकरणों को साथ लेकर आगे बढ़े। (उदाहरण स्वरूप लघु गणना, क्रम, क्रम-परिवर्तन, संयोग आदि) ताकि सीमित और असीमित

राशियों के अल्प-बहुत्त्व की समस्या को सुलझाया जा सके। यह कार्य उन्होंने असीमित संख्याओं के सिद्धान्त के जन्म से सदियों पूर्व किया। यह टिप्पणी जॉर्ज कैंटर की है।

जीरो की अनकही कहानी

कर्म सिद्धान्त के अनेक प्रकरणों में निषेध, अभाव, अनुपस्थिति, निराभिव्यक्ति, शून्य, दरार जैसे विचार सामने आते हैं (एसकेजी, 3.2.59 तथा 5.3.90 और केपीएस 4 आदि)। स्वाभिक रूप से, गणितीय प्रवृत्ति शून्य को पुराने नामों से पुकारती रही जैसे सिफ़र, जीरो आदि। भारतीयों ने इसे शून्य (अर्थात खाली या दरार) कहा जो अरबी में जाकर सिफ़र हो गया। इसका ग्रीक नाम ऑमिक्रोन, प्लैनुडोस में ज़िफरा और इतालवी में ज़ैपीरो है।'कपिल गीता' में पाँच प्रकार के शून्यों का उल्लेख है।

शून्य (ज़ीरो) का वर्तमान रूप ग्रीक के ऑमिक्रोन (0) से आया होगा, जिसका दूसरा अर्थ है कुछ नहीं। हो सकता है यह ब्राह्मी के सींगों वाले वृत्त ने सुझाया हो जो दस का प्रतीक था, अथवा भारतीयों के छोटे वृत्त (0), या बिन्दु जिसको नकारात्मक होने के कारण नष्ट हो जाना माना जाता है।

भारत में जीरो प्रतीक का प्रयोग पिंगल ने (दूसरी सदी ईसा पूर्व) में अपनी कृति 'छन्द-सूत्र' में किया था। भारतीय शिलालेखों में जीरो का सर्वप्रथम प्रयोग जयवर्द्धन द्वितीय की रघोली पट्टियों में मिलता है (ईसा की आठवीं सदी)। भोजदेव कालीन ग्वालियर के शिलालेख में भी ज़ीरों का उपयोग है। ज़ीरो का प्रतीक 'महाबन्ध' (ईसा की दूसरी सदी) में अन्तरालों को भरने के लिए प्रयुक्त हुआ है। 'धवला' और 'जयधवला' टीकाओं (ईसा की नवीं सदी) में इसे अनेक रूपों में प्रयुक्त किया गया है। यह एक नकारात्मक प्रतीक है, अनुपस्थिति का द्योतक है, एक ऐन्द्रिक आत्मा, और दो ऐन्द्रिक आत्मा के लिए भी इसका उपयोग किया गया है। अगृहीत अवस्था के लिए भी जिसमें कोई आत्मा भौतिक परिवर्तन होने पर कर्म को आत्मसात नहीं करती, अन्तरालों को भरने के लिए और संक्षिप्तिकरण के लिए उपयोग देखने को मिलता है।

बीजगणित में शून्य (ज़ीरो) का सर्वप्रथम भारतीय व्यवहार सातवीं सदी के 'ब्रह्म-स्फुट-सिद्धान्त' में देखने को मिलता है। ज़ीरो द्वारा संख्या के विभाजन को भास्कर ने 'ख-हार' कहकर व्याख्यायित किया है। इसके सम्बन्ध में भास्कर ने कहा, ''उस मात्रा में जिसमें ज़ीरो इसका विभाजक है, अनन्त और अपरिवर्तनीय ईश्वर में कोई बदलाव नहीं आता चाहे वह संसारों के नष्ट और रचना होने के काल हों। तथापि इन कालों में अनेक प्रकार के जीव नष्ट होते और उत्पन्न होते हैं।''

अनन्तों के अन्धकारमय युगों का इतिहास

अनन्तों के तीन प्रकार है- दार्शनिक, सम्भावित और वास्तविक। पाश्चात्य दर्शन के इतिहास में अनन्त का सर्वप्रथम उल्लेख अनैक्सीमैंडर (ईसा से छठी सदी पूर्व) की शिक्षा में धार्मिक और आध्यात्मिक प्रकरणों में मिलता है। इसमें अनन्त से तात्पर्य किसी ऐसी चीज से है जिसका आकार, संख्या और अंश को किसी भी प्रकार नापा नहीं जा सकता। इसीलिए इसको सर्व-विस्तारपूर्ण और सर्व-शक्तिमान कहा गया। यह प्रवृत्ति नहीं बदली और बाद में आने वाले दार्शनिक- पारमेनिडीज़, अरस्तु, देकार्ते, स्पीनोज़ा, लाइबनिज़, लॉक, बर्कले, ह्यूम, कांट और हीगेल आदि ने अनन्त के ज्ञान को दार्शनिक क्षेत्र से आगे नहीं ले जा सके।

सम्भावित अनन्त गणितीय अवधारणा है। यह आरम्भिक ग्रीक रेखागणित में विद्यमान थी। यह धारणा प्रचलित थी कि एक सीधी रेखा अनन्त अन्तरिक्ष की किसी भी दिशा में असीमित रूप में खींची जा सकती है। जैन गणित में दस प्रकार के अनन्त स्थापित किए गये: नामकरण में अनन्त, गुण में अनन्त, प्रवाहों में अनन्त, गणना में अनन्त, आयामहीनता में अनन्त, एक-विमीय दिशा सम्बन्धी अनन्त, द्वि-दिशा सम्बन्धी अनन्त, वायवीय अनन्त, अन्तरिक्षीय अनन्त, ज्ञान सम्बन्धी अनन्त और काल सम्बन्धी अनन्त। ग्रीक गणितज्ञ ज़ीनो ने 450 ईसा पूर्व अपरिमित विभाजन, और स्थान और काल के सीमित खण्डों की समस्या को 'एकीलस एण्ड द टोरट्वाइज़' और 'द ऐरो' के विरोधाभावों के माध्यम से उठाया।

वास्तविक अनन्तों का स्वर्ग

जॉर्ज कैंटर (1845-1918) ने अनेक गणितज्ञों के निरन्तर विरोध के बावजूद अनन्त के असाधारण और साधारण के सम्बन्ध में राशि सैद्धान्तिक क्रियाओं के गणितीय प्रबन्ध-कौशल के क्षेत्र में विजय प्राप्त की। वे उपमा और संख्या के समान हैं, जो लोकोत्तर गणित के माप हैं, जिनका विस्तृत वर्णन प्राकृत में जैनधर्म के करणानुयोग वर्ग में मिलता है। फ्रैन्केल के अनुसार यह काम विज्ञान में कापरनिकस का खगोल सिद्धान्त, आइन्सटीन का आपेक्षिक सिद्धान्त और भौतिकशास्त्र का क्वान्टम सिद्धान्त जैसा ही महत्त्वपूर्ण है। ए.एन. सिंह ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ हिन्दू मैथेमैटिक्स' में लिखा है कि भारत को इस पर गर्व करना चाहिए कि जो कार्य जॉर्ज कैंटर ने बीसवीं सदी के आरम्भ में किया वह अनेक सदियों पूर्व भारत के प्राकृत और संस्कृत ग्रन्थों के रचनाकारों ने कर दिया था।

कैंटर के सम्बन्ध में हिलबर्ट (1862-1943) ने कहा था, ''कैंटर ने अपने कार्य से गणित की सर्वाधिक उर्वर और शक्तिशाली शाखाओं में से एक की रचना की। यह ऐसा स्वर्ग है जिससे हमें कोई बाहर नहीं निकाल सकता।''

वास्तविक अनन्तों के तथाकथित स्वर्ग के बारे में ए.एन. सिंह ने लिखा, 'जैन दार्शनिक अनन्त के सम्बन्ध में विभिन्न मतों का वर्गीकरण करने में सफल हुए और संख्या सम्बन्धी अनन्त का सटीक व्याख्या विकसित की।'

गणित के जोड़, घटाना, गुणनफल और विभाजन नियम वास्तविक अनन्तों के सम्बन्ध में वही नहीं हैं जो सीमित मात्राओं के बारे में। उनके लिए एक राशि सैद्धान्तिक रूप बनाया जाता है। आदि-तत्त्वों के ब्रह्माण्ड की व्याख्या की जाती है और राशियों की ब्रह्माण्डीय क्रियाओं, अर्थात् संगत, विच्छेदन, पूरक विधि और गुणनफल, से दूसरी राशियाँ बनती हैं जो स्वयं ब्रह्माण्ड से बड़ी नहीं है। 'वृहदारण्यक उपनिषद्' के पहले सूत्र में सम्भवतया इसकी एक झलक मिलती है-

''ओम पूर्णमदः पूर्णमिदम् पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावाशिष्यते॥''

प्राकृत ग्रन्थों में ज़ीरो के बाद अनन्तमांश का महत्त्व है। अनन्तमांश को एक आदि-तत्त्व के रूप में देखा गया है। इसके समूह को राशि कहते हैं। नक्षत्र राशि, जीव राशि आदि को अनेक प्रसंगों में प्रयुक्त किया

गया। आरम्भिक विद्या-जागरण काल में भारतीय गणित में जिन विषयों पर लिखा गया, उनमें से एक राशि गणना थी जैसा कि 'स्थानांग' के निम्नलिखित सूत्र (747) से स्पष्ट है-

''परिकम्मम ववहारो रज्जु रासी कलसवन्ने य जावन्तावती वग्गो घनो तथा वग्गावग्गो विकप्पो तं।''

प्राकृत ग्रन्थों में राशियों के कई रूप हैं- प्रवाह, धारणा, स्थान-बिन्दु, काल-क्षण, नियन्त्रण, घटना, नियन्त्रण का अविभाज्य अनन्तमांश तथा योगिक और मोहिक अवस्थाओं के वे प्रयास जो भौतिक उपलब्धियों से प्रेरित होते हैं। अनन्तमांशिक राशियों को बनानेवाला अति सूक्ष्म, चरम प्रदेश बिन्दु है, जो पदार्थ के परम अणु की स्थिति रूप है या अविभाज्य काल-क्षण जो पदार्थ में होने वाली घटना से सम्बन्धित रहता है। कैंटर की आच्छादन राशि की प्राप्ति के विचार के समानान्तर प्राकृत ग्रन्थों में विस्तार, वितरण और गुणन के विकल्प जान पड़ते हैं। राशि प्रमाणों की आपेक्षिकता के सिवाय गणानानन्त का वर्णन बहुत विस्तृत और जटिल है। गणानानन्त ग्यारह अनन्तों में से एक है। गणनानन्त में असंख्यात राशि संख्यात और अनन्त के बीच स्थित है। ये सभी धारणाएँ न केवल शब्दार्थ- परिवर्तन रूप में वरन् प्रतीक रूप में भी थीं। जैन गणित की ये उपलब्धियाँ कैंटर के कार्य से सदियों पूर्व अर्जित की गयी थी।

मन की तरंगें मोक्षमार्ग में बाधक

-आचार्यश्री विद्यासागरजी

चंद्रगिरि डोंगरगढ़ में विराजमान संत शिरोमणि 108 आचार्यश्री विद्यासागर महाराज जी ने मांगलिक उपदेश देते हुये एक दृष्टांत के माध्यम से बताया कि एक संघ में मुनि महाराज ने सल्लेखना के कुछ दिनों पहले यम सल्लेखना का नियम ले लिया था ऐसे मुनि महाराज के दर्शन के लिए चक्रवर्ती तक आये थे। मुनि महाराज के शरीर में कुछ भी ग्रहण करने की शक्ति नहीं बची थी ऐसे परीक्षा के समय में उन्हें मन में विकल्प हो रहा था तो उन्होंने गुरु महाराज से कहा की उन्हें मन में आहार लेने का विकल्प आ रहा है। इस बात को सुनकर समस्त मुनि संघ चिंतित हो गया कि ऐसी परीक्षा की घड़ी में मुनि महाराज क्या कह रहे हैं? उन्हें जब आहार करने कहा गया तो उनके हाथों की अंजलि से जल मुह तक भी नहीं आया और सारा जल बाहर ही गिर गया इसके बाद ग्रास (रोटी) दिया गया तो मुह में चबाने की भी ताकत नहीं थी। गुरु महाराज ने मुनि महाराज को मन को संयमित करने को कहा, मन की तरंगें मोक्षमार्ग में बाधक है। मृत्यु निश्चित है इसलिए हमें हर पल हर श्वांस में प्रभु का स्मरण करते हुए आगम अनुसार मोक्षमार्ग में चारों कषायों को जीत कर मन को संयमित कर सल्लेखना व्रत को धारण करना चाहिए। आचार्यश्री ने बताया कि उनके गुरु श्री ज्ञानसागर महाराज जी की सल्लेखना के समय उनका शरीर जीर्ण-शीर्ण होने के बाद भी उन्होंने अंतिम समय में भी प्रत्येक स्वांस में प्रभु का स्मरण करते हुए अपने शिष्यों को उपदेश देते रहे। आचार्यश्री ने प्रभु से प्रार्थना की- कि ऐसे व्रतों का निर्वहन वे भी कर सकें और अंतिम स्वांस तक अपने गुरु के जैसे प्रभु का स्मरण कर सल्लेखना धारण कर सकें।

गतांक से आगे

पारसचन्द से बने आर्जवसागर

–आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी

दमोह नगर की ओर विहार करते समय लोगों का जन सैलाव बढ़ता गया। एक दिन प्रात: काल की मंगल बेला में जय-जय ध्वनि एवं वाद्य यंत्रों के मंगल शब्दों के साथ दमोह नगरी में मंगल प्रवेश हुआ। प्रत्येक जैन घर के सामने मुनिवर का पादप्रक्षालन एवं आरती उतारी गयी। दमोह नगर का प्रसिद्ध जिनालय जो विशाल होते हुये भी नन्हें मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है ऐसे जिनालय में प्रवेश करते समय कमेटी के लोगों ने मुनिवर का पादप्रक्षालन किया। सभी श्रावक-श्राविकाओं ने मंगल आरती उतारी पश्चात् जिनालय का दर्शन करके इसी जिनालय की विशाल धर्मशाला के सभागार में महाराजजी का मंगल प्रवचन हुआ। महाराजश्री के प्रवचन सुनकर अपार जनसमूह को हृदय में अपूर्व संतोष का अनुभव हुआ।

बहुत लोग यही चाह कर रहे थे कि दमोह जिले के फुटेराकलाँ गाँव में जन्में, जिनकी काया और पथरिया में बीता जिनका बचपन और जबेरा रहा जिनका ननिहाल और दमोह में पूर्व से ही बसे जिनके पूर्व परिजन ऐसे आचार्यश्री विद्यासागरजी के प्रियतम शिष्य गुरुवर श्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ सब की वर्षों की भावना से चातुर्मास हेतु दमोह नगरी में पधारे। भारत के कोने-कोने में हुआ जिनका विहार और अनेक भाषाओं का जिन्होंने अर्जन किया ज्ञान, अनेक देशों की जानी है परम्परा जिन्होंने ऐसे अनेक कृतियों के सृजक गुरुवर आर्जवसागरजी के प्रवचन सुनकर लोगों ने अपने आप को भाग्यशाली माना।

दमोह नगर के कुछ लोगों ने राँची नगर के वर्षायोग में दमोह नगर में आपका वर्षायोग सम्पन्न हो ऐसा मंगल निवेदन मुनिश्री आर्जवसागरजी के ससंघ चरणों में किया था। ऐसे श्री चन्द्रकुमार जी जैन, धनीरामजी जैन, जिनेश जैन, दीक्षा किराना वाले नन्ना जी आदि लोगों ने बड़े उत्साह से जिनकी वर्षायोग में ही मात्र नहीं सिविल वार्ड में तीसरे खण्ड पर बनी नव निर्मित वेदी की विशाल प्रतिमा हेतु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी सम्पन्न हों ऐसी मंगल भावना भी साथ थी। जिस कार्यक्रम हेतु संजीव जैन (शाकाहारी), सुनील जैन (वेजिटेरियन) आदि भी बड़े उत्साहित हुये। वर्षायोग की तैयारी में जुटे राजेश जैन (हिनोती वाले) अध्यक्ष (शाकाहार उपासना परिसंघ) नवीन निराला आदि ने वर्षायोग की स्थापना कर काफी उत्साह दिखाया। साथ में मन्दिर के अध्यक्ष गिरीश नायक जी और पदम लहरी आदि ने भी प्रभावना में अच्छा योगदान दिया।

तदुपरान्त चातुर्मास की कलश स्थापना हुई। जिसमें राजेश जैन फुटेरा, रज्जन जैन, चन्द्रकुमार जैन, आदि लोग काफी उत्साहित थे। कलश स्थापना के दिन फुटेरा, जबेरा, पथरिया, गढ़ाकोटा, नोहटा, अभाना, शाहपुरा, भोपाल, जबलपुर आदि स्थानों से भी लोगों ने आकर कार्यक्रम के अतिथि बन गुरुवर को श्रीफल अर्पित कर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई, प्रवचन सुनकर काफी हर्ष विभोर हुये और अपने-अपने नगर में भी गुरुवर का विहार हो ऐसा निवेदन किया। चातुर्मास में प्रतिदिन गुरुवर के प्रात: 8:30 बजे से विशाल सभागृह में प्रवचन अनवरत चलते रहे। मध्यान्ह काल में आगम की कक्षायें चलीं और सायंकाल में धार्मिक संस्कार की कक्षा चली। तदुपरान्त दिन-प्रतिदिन प्रवचनों की श्रृंखला चलते हुए भक्तों की भीड़ बढ़ती चली गयी। गाँव-गाँव से लोग मुनिवर की प्रवचन शैली से प्रभावित होकर दौड़े-दौड़े आते थे। रविवारीय मध्यान्ह काल में होने वाले

प्रवचन भी विशाल पण्डाल में चलते रहे। जिसमें आलेख पूर्वक भाषण प्रतियोगिता प्रश्नमंच का कार्यक्रम भी साथ में चलता रहा। रविवारीय प्रवचन में तो दमोह नगर में बाजार का दिन होते हुए भी संख्या में कोई कमी नहीं दिखती थी बल्कि ट्रेन की सुविधा होने से आजू-बाजू के नगरों से इतने लोग आते थे कि विशाल धर्मशाला में बने पण्डाल में जगह कम पड़ जाती थी।

वर्षायोग का सबसे विशिष्ट आकर्षण षोडसकारण महापर्व का अभूतपूर्व आयोजन रहा। दमोह में पूज्य मुनिश्री के पावन प्रेरणा से पुराने रिकार्ड ध्वस्त करते हुए करीब 400 से भी अधिक भक्तों ने बहुत ही श्रद्धा भाव के साथ षोडसकारण व्रत पर्व किये। इसमें युवा, युवती एवं वृद्ध सभी लोगों ने अपनी पूरी शक्ति और भक्ति भाव को प्रकट करते हुए कुएँ के पानी का उपयोग करते हुए व्रत साधना की। दशलक्षण पर्व में श्रावकसाधना संस्कार शिविर लगाया गया। जिसमें संगीतमय पूजन, नियमित जाप, प्रवचन, प्रतिक्रमण एवं रात्रिकालीन धार्मिक सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि सम्पन्न हुये। सम्पूर्ण नगर में धर्ममय वातावरण बना जिसकी सभी ने मुक्तकण्ठ से तारीफ की। सबसे अधिक तमिलनाडु और महाराष्ट्र से आये श्रद्धालु भक्तगणों ने सर्वाधिक धर्मलाभ अर्जित किया।

वर्षायोग के दौरान म.प्र. शासन के उद्योग, आवास और पर्यावरण मंत्री श्री जयंत मलैया, पूर्व शिक्षा मंत्री मुकेश नायक, म.प्र. हस्तशिल्प एवं हथकरघा विकास निगम के अध्यक्ष श्री कपूरचंद घुवारा आदि ने भी समय-समय पर आकर गुरुवर आर्जवसागरजी की चरण वंदना का सौभाग्य प्राप्त किया।

वर्षायोग के दौरान एक और सबसे अधिक आकर्षण का केन्द्र श्री 1008 इन्द्रध्वज महामण्डल विधान का अभूतपूर्व आयोजन रहा। नगर के मध्य स्थित विंदन तिराहे के मैदान में मुनिवर के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से आयोजित इस ऐतिहासिक आयोजन का निर्देशन ब्र. जयकुमार जी निशान्त (ख्याति प्राप्त प्रतिष्ठाचार्यश्री गुलाबचन्द पुष्प, टीकमगढ़ के सुपुत्र) ने किया। प्रतिदिन विधान में अभिषेक पूजन आदि के अलावा मुनिश्री द्वारा जैन मांगलिक प्रवचन हुये तथा दोपहर में मुनिश्री के मुखारबिन्द से जैन रामायण पर प्रवचन हुये। रात्रि में महाआरती का आयोजन हुआ जिससे महती धर्मप्रभावना हुई। जैन मिलन एवं परिसंघ द्वारा प्रतिदिन महाआरती के पात्रों को ससम्मान 5 बग्गियों पर मुकुट आदि वस्त्र आभूषणों से सजाकर बैंड बाजों और नृत्यगान करते हुए कार्यक्रम स्थल पर लाया जाता था। रात्रि में प्रवचनों के पूर्व राजुल-नेमि, रानी चेलना, भाग्य का खजाना अनेक अन्य धार्मिक नाटक जैसे सोशल ग्रुप मंडलेश्वर, त्रिशलादेवी महिला मण्डल अशोक नगर, धर्म संस्कार बालक-बालिका मण्डल दमोह आदि के द्वारा सम्पन्न हुए। जिन्हें दर्शकों की विशेष सराहना प्राप्त हुई। विशिष्ट प्रवचनकारों में डॉ. सुशील जी मैनपुरी, पं. गुलाबचन्द्र पुष्प, डॉ. भागचन्द भागेन्दु प्रमुख रहे। इन्द्रध्वज महामण्डल विधान का भव्य समापन विशाल नगर गजरथ फेरी से हुआ। दिनांक 3 नवम्बर 2007 को निकाले गये इस 2 कि.मी. लम्बे विशाल नगर गजरथ फेरी के जुलूस में पूज्य मुनि संघ के अलावा इन्द्र-इन्द्राणी और बड़ी संख्या में भक्तगणों ने कतार-बद्धता के साथ सम्मिलित होकर अभूतपूर्व धर्मप्रभावना का परिचय दिया। विधान के दौरान आमंत्रित अन्तर राष्ट्रीय शाकाहार विशेषज्ञ डॉ. के.एम. गंगवाल, पूना एवं **श्री श्रीपाल जैन 'दिवा', भोपाल** को शाकाहार उपासना परिसंघ द्वारा **अहिंसा महावीर चक्र** से सम्मानित किया गया। वर्षायोग

के बीच अहिंसा संगोष्ठी भी हुई और वर्षायोग का निष्ठापन दीपावली के दिन हुआ। भ.महावीर की पूजन एवं निर्वाण लाडु पूर्वक महावीर भगवान का मोक्षकल्याणक एवं गौतम गणधर का केवलज्ञान ज्योति रूप दीपावली पर्व मनाया गया। वर्षायोग के समापन पर कंठपाठ प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें अनेक युवा प्रतियोगियों ने बढ़चढ़ कर हिस्सा लिया। वर्षायोग की स्थापना से समापन तक शाकाहार उपासना परिसंघ के अध्यक्ष राजेश जैन (हिनोतिया वाले), संजीव शााकाहारी, रतनचन्द प्राचार्य, सुनील वेजीटेरियन, महेश बड़कुल, नवीन निराला, ताराचन्द, सुनील बजाज, सौरभ लहरी, जैन पंचायत अध्यक्ष विमल लहरी, नरेन्द्र चौधरी, श्रेयांस लहरी, मोती गोयल, अशोक कामर्शियल, गिरिश अहिंसा आदि का सक्रिय सहयोग रहा।

दिनांक 25 नवम्बर 2007 को दमोह नगर में स्थित एम.एल. स्कूल के मैदान में पिच्छि परिवर्तन समारोह आयोजित किया गया जिसमें गुरुवर आर्जवसागरजी के संघ की पुरानी पिच्छिकाएँ प्राप्त करने का सौभाग्य श्री नरेन्द्र जैन (हीराशॉप) तथा भरतकुमार सपत्नीक ने प्राप्त किया। नई पिच्छका देने का सौभाग्य चन्द्रकुमार, संजय, एस.के. जैन, पवन बमोरिया, संजीव शाकाहरी, सुनील वेजीटेरियन, नवीन निराला, महेश बड़कुल, चन्द्रेश सर्राफ, मिश्रीलाल तथा तमिलनाडु से आये भक्तों ने प्राप्त किया। इस अवसर पर दावणगेरे से पधारे श्री पदमराजजी का गौशाला के संचालन और धर्मसाधन के अनेक मन्दिर आदि के निर्माण के लिए दान देने वाले होने नाते उनको शाकाहार उपासना परिसंघ की ओर से "अहिंसा रत्न अवार्ड" से सम्मानित किया। कन्नड़ भाषा में प्रकाशित जैनागम संस्कार का विमोचन श्री पदमराजजी के पुण्यार्जकत्व में वीरेन्द्र इटोरिया, विमल लहरी जी के द्वारा किया गया। चातुर्मास के दौरान आयोजित कंठपाठ प्रतियोगिता में विजेताओं को स्वर्ण पदक तथा रजत पदक से सम्मानित किया गया। भगवान महावीर आचरण संस्था समिति भोपाल के अध्यक्ष डॉ. सुधीर जैन तथा सचिव डॉ. अजित जैन ने समिति की संरक्षक सदस्यता ग्रहण करने वालों को सम्मानित किया। समारोह को देखने के लिए पथरिया, बांसा, फुटेरा, जबेरा, आदि से भी बहुत संख्या में श्रद्धालु आये थे। कार्यक्रम के बीच मुनिवर का मंगल प्रवचन हुआ। इस प्रकार यह पिच्छि परिवर्तन समारोह अपार जन समूह के बीच सानन्द सम्पन्न हुआ।

कार्तिक अष्टान्हिका पर्व में नन्हें मन्दिर में मुनिसंघ के सान्निध्य में सिद्धचक्र महामण्डल विधान सानन्द सम्पन्न होने के समय दमोह में स्थित सिविल वार्ड श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर के कमेटी द्वारा मुनिवर आर्जवसागरजी के ससंघ चरणों में तीसरे मंजिल पर नव निर्मित वेदी पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हेतु एवं सिविल वार्ड में पधारने का भक्ति भाव से नम्र निवेदन किया गया। पूर्व से ही विदित धर्म प्रभावना को सुनते हुए मुनिवर ने मंगल आशीर्वाद दिया और बड़ी प्रभावना के साथ सिविल वार्ड दि. जैन मन्दिर की ओर विहार किया। सभी को कुछ और आशा थी मुनिवर का थोड़े दिनों और लाभ मिलेगा पर उनकी आंखें अश्रु जल से भर आयीं। लेकिन यह आशा रखते हुए कि चलो यहीं नगर में ही तो विहार हो रहा है हम कार्यक्रम सम्पन्न होते ही पुन: मुनिवर को वापिस लौटा ले आयेंगे और सभी लोग जय-जयकार मंगल गीत भजन के साथ सिविल वार्ड मन्दिर तक मुनिवर के साथ-साथ आये और सिविल वार्ड की मंगल आगवानी में भी सम्मिलित हो गये। मुनिवर का पादप्रक्षालन, दीप-आरती के साथ भव्य आगवानी हुई और प्रवास पर प्रतिदिनों के मंगल प्रवचनों और मार्गदर्शन आदि से

समाज का उत्साह बढ़ा। कुछ ही दिनों में छोटे काम ने ही बड़ा रूप ले लिया कि नीचे की मंजिल के छोटे शान्तिनाथ बिम्ब आदि को कमल सहित तीसरे मंजिल पर विराजमान करने का, ऊपर की छत बड़ी करने का एवं नीचे मंजिल की नयी वेदी के साथ मूलनायक शान्तिनाथ भगवान की करीब पैंतीस इन्च की और आजू-बाजू आदिनाथ और चन्द्रप्रभु की प्रतिमायें इक्कीस-इक्कीस इन्च की पीतल या अष्ट धातु की प्रतिमा बनाने का निश्चय हुआ और भक्तों ने अपना पूर्ण सहयोग देकर अविलम्ब कार्य को सम्पन्न करने का संकल्प लिया।

मुनिवर श्री आर्जवसागरजी के मुखारबिन्द से पंचकल्याणक की तिथि प्राप्त होते ही मुनिवर की प्रेरणा से लोग इस पंचकल्याणक गजरथ महामहोत्सव के कार्यक्रम हेतु आचार्यश्री विद्यासागरजी के आशीर्वाद लेने रहली (पाटन) के पास पहुँचे और वहाँ गुरुवर को ससंघ इस भव्य आयोजन में पधारने का नम्र निवेदन भी किया। आचार्यश्री का प्रसन्नता पूर्ण आशीर्वाद पाकर लोगों का उत्साह दिन दुगना, रात चौगुणा बढ़ता चला गया और एक पंडाल बनाकर शुभ मुहुर्त्त में पंचकल्याणक हेतु पात्र चयन का कार्यक्रम रखा गया और सिविल वार्ड के निकट इस कार्यक्रम के प्रतिष्ठाचार्यत्व हेतु पं.गुलाबचन्द पुष्प जी एवं पं. जय निशान्त को आमंत्रित किया गया। इस भव्य आयोजन में माता-पिता, सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी, ईशान इन्द्र-इन्द्राणी आदि पात्रों की भूमिका निभाने का सौभाग्य श्री जिनेश जैन सपत्नीक, श्री रूपचन्दजी जैन सपत्नीक, श्री चन्द्रकुमार जैन सपत्नीक को प्राप्त हुआ तथा और अनेक पात्रों के चयन में लोगों ने भाग लेकर अपना अमूल्य सहयोग अर्पित किया।

पात्र चयन के आगे-पीछे प्रभावना एवं जन जुड़ाव हेतु मुनिवर का ससंघ विहार मील मन्दिर, काँच मन्दिर, नसियाँ मन्दिर, वसुन्धरा कॉलोनी, नेमिनगर, राजीव नगर, जबलपुर नाका आदि में हुआ। जहाँ प्रवचन व आहार चर्या के द्वारा बड़ी प्रभावना हुई। इसी के साथ पूर्व में किये गये लोगों का निवेदन ध्यान में रखते हुए दमोह के निकटस्थ सदगुँवा जिनालय दर्शन करते हुए वहाँ एक रात रुककर मुनिवर का जहाँ बचपन बीता ऐसे गाँव पथरिया नगर की ओर विहार किया। जिसके पूर्व में पथरिया दि.जैन समाज कमेटी के कमलेश चौधरी, राजेश सेठ आदि ने मुनिवर के चरणों में श्रीफल भेंटकर नगर पधारने का नम्र निवेदन किया था। नगर की सारी जैन समाज ने मुनिवर की भव्य आगवानी की, वाद्य एवं जय-जयकारों से मानों आकाश ही गूंज उठा हो ऐसा लगा और नगर प्रवेश पर जगह-जगह गृह-गृह के सामने गुरुवर का पाद प्रक्षालन एवं आरती कर अपनी विशेष भक्ति प्रकट की। पश्चात् जिन मन्दिर का दर्शन कर पाण्डाल में मुनिवर का मंगल प्रवचन हुआ फिर सभी लोगों ने मुनिवर के लिए शीतकालीन प्रवास एवं प्रतिदिन प्रवचन हेतु श्रीफल भी अर्पित किये। स्टेशन रोड पर स्थित विशाल धर्मशाला में मुनिवर का वास्तव्य रहा। प्रतिदिन पाण्डाल में प्रात:कालीन प्रवचन चले और अपार जन समूह ने अपूर्व लाभ लिया जिसमें मुनिवर के पूर्व (अवस्था के) बचपन के मित्रगण संजय, विजय, पदम, रवीन्द्र आदि उपस्थित रहते थे और जिन्होंने मुनिवर को (बचपन अवस्था में) स्कूली शिक्षा का ज्ञान दिया। ऐसे कई विभिन्न जाति के शिक्षकगण भी मुनिवर के धारावाहिक प्रवचन को सुनकर आनन्दित होते थे। सभी के हृदय में बड़ा संतोष हुआ कि पारसचन्द की अवस्था से गृह छोड़ने के बाद मुनिवर अब प्रथम बार नगर पधारे हैं। वह भी मुनि आर्जवसागरजी बन संयम लेकर के मानो नगर को ही पावन पुनीत और धन्य करने आये हैं। मुनिवर के करीब 15 दिनों के प्रवास में सर्व जिनालय के दर्शनों के साथ आहार चर्या हेतु नवाधाभक्ति करने वाले कई प्रमुख

घरों में भी चरण पड़े। श्री 1008 पार्श्वनाथ दि. जैन बड़ा मन्दिर जिसके प्रांगण में पारसचन्द बचपन में क्रीड़ा किया करते थे उसकी विशाल धर्मशाला व स्कूल परिसर में मुनिवर की चरण पड़े एवं आहार चर्या आदि के साथ मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये। यहाँ तक की पूर्व अवस्था के गृहस्थाश्रम व्रती माता श्रीमति मायादेवी जैन, तत्पुत्र श्री संजय जैन, श्री अरविन्द जैन के गृह निवास पर भी आहार चर्या हेतु मुनिसंघ के चरण पड़े। साथ ही, अन्त में एक विशेष प्रवचन नव निर्मित आदिनाथ दि. जैन मन्दिर के परिसर स्थित प्रांगण में पंडाल बनाकर रखा गया जिसमें सम्पूर्ण नगर के लोगों ने आकर के मुनिवर का विशेष प्रवचन सुनकर बड़े ही पुण्य का लाभ लिया। तदुपरान्त ऐसी विशेष प्रभावना को करते हुए दमोह नगर से पंचकल्याणक व गजरथ महोत्सव हेतु पुनःपुनः दौड़े-दौड़े आने वाले दमोह के लोगों के नम्र निवेदन से मुनि संघ का विहार दमोह नगर की ओर हो गया। बीच के नोरु गाँव में आहार चर्या सम्पन्न हुई और सायंकाल में बड़े ठाट-बाट के साथ गुरु संघ का दमोह नगर के मील के मन्दिर होते हुए सिविल वार्ड में मंगल प्रवेश सम्पन्न हुआ।

निरन्तर......

धार्मिक एवं संस्कार युक्त शिक्षा वाले जैन विद्यालय की होगी स्थापना 5 से 7 एकड़ भूमि की दान

दमोह: संत शिरोमणि आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के परम प्रभावक शिष्य युवाचार्य आर्जवसागरजी महाराज की पावन प्रेरणा से प्रभावित होकर अक्षय तृतीया के पावन पर्व पर नसिया जैन मंदिर में आयोजित भक्तामर विधान के अवसर पर धार्मिक एवं संस्कार युक्त शिक्षा के विद्यालय हेतु तरूण सराफ द्वारा 5 से 7 एकड़ भूमि हटा रोड देहात थाना के समीप प्रदान करने की घोषणा की तथा उन्होंने आचार्यश्री को श्रीफल अर्पित कर आशीर्वाद लिया। इस विद्यालय में हिन्दी एवं संस्कृत के ज्ञान पर विशेष जोर दिया जावेगा। इस अवसर पर मोतीलाल, महेश दिगम्बर, विजय चौधरी, अजय निरमा, राजेश चौधरी, नेमचंद बजाज, अभय बनगांव, राजेश चौधरी, गुलाब टेलर, रूपचंद जैन, चंद्रकुमार न्यू किरण, जिनेश जैन, महेन्द्र करूणा, वेजीटेरियन परिवार आदि 15 से 20 लोगों ने विद्यालय के निर्माण में अपनी ओर से लगभग एक-एक लाख रुपये की राशि सहयोग के रूप में प्रदान करने की घोषणा की। कार्यक्रम में उपस्थित बड़ी संख्या में जैन समाज के श्रावकगणों ने तालियों की गड़गड़ाहट से सभी दानदाताओं की अनुमोदना की। इसके पूर्व आचार्यश्री आर्जवसागरजी ने अपने मंगल उद्‌बोधन में ओजस्वि प्रेरणा प्रदान करते हुए कहा कि आज विदेशी लोग हमारे देश में विदेशी संस्कार वाली शिक्षा देकर हमारे बच्चों को संस्कार विहीन कर रहे हैं। उनसे बचने के लिए तथा शाकाहार एवं संस्कारित बनाए रखने के लिए बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के साथ-साथ हिन्दी एवं संस्कृत वाली धार्मिक संस्कार युक्त शिक्षा देना अनिवार्य हो गया है। इस हेतु हमें अपनी जैन संस्कृति को बढ़ावा देने वाली शिक्षा हेतु अपने विद्यालय खोलना आवश्यक है। इस हेतु 5 से 7 एकड़ भूमि में जहाँ 4 एकड़ में विद्यालय स्थापित होगा वहीं 2 एकड़ में एक जैन मंदिर के साथ-साथ संतो व मुनियों की चर्या, सल्लेखना आदि हेतु आवास भी निर्मित किये जाएँगे।

-सुनील वेजीटेरियन, प्रचार प्रभारी, दमोह

मंगलाचरण

डॉ. अनिल चौधरी (दमोह)

(फिल्मी तर्ज–मुकद्दर आजमाना चाहता हूँ)

मुकद्दर आजमाना चाहता हूँ।
तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ।
मुझे बस भक्ति का वरदान दे दो।–2

जिन्हें समझा था मैंने अपना साथी।
वही निकले बड़े विश्वासघाति।
मैं उनसे दूर रहना चाहता हूँ।
मुझे बस........

मैं ठोकर खा चुका हूँ जग के दाता।
तुम्हीं हो दीन बंधु पितु और माता।
मैं भक्ति आजमाना चाहता हूँ।
तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ।
मुझे बस........

किये हैं पाप मैंने कितने भारी।
शरण आया है तेरे ये पुजारी,
गुरु आचार्य अपने साथ ले लो।
गुरु अपनी शरण में नाथ ले लो।
मैं भक्ति आजमाना चाहता हूँ।
मुझे बस........

किये हैं ज्ञान जिनने यूँ उजागर।
परम तपस्वी हैं ये आर्जवसागर।
मैं मुक्ति पद को पाना चाहता हूँ।
मैं तेरे संग चलना चाहता हूँ।
मुझे बस भक्ति का वरदान दे दो।.....

चेतन धन का संहार क्यों?

डॉ. रघुनन्दन चिले

चाहे माँस आदमी का हो
या पशु–पक्षी का।
ऐसा लगता है जैसे खा रहे हों
अपना ही माँस।
प्रकृति समृद्धतम है–
हर स्वाद–रस के फल, वनस्पति
उपलब्ध हैं धरा पर।
परमात्मा ने इतनी उदारता से
दिये हैं जीवपोषी अन्न।
चेतन–धन का संहार क्यों?
अरे डाल नहीं सकते जान चींटी तक में
और काटते–पीलते जा रहे हो पशु–पक्षी।
अपने कोमल उदर और आँतों को
बनाओ जीवन–रस लेने का पवित्र यंत्र
न बनने दो उन्हें कब्रिस्तान!

कवि तो भगवान है

इंजी. प्रेक्षा जैन, जबलपुर

(जन्म 04 फरवरी 1999)

कवि तो भगवान है,
उसी से तो शब्दों में प्राण है।
वो महान है, सर्व शक्तिमान है।
कवि की कलमें रथ हैं,
तो डायरी के पन्ने पथ हैं।
कवि एक जादूगर है,
उसी से तो दिल की बातें पन्नों पर उजागर हैं।
कवि हजारों के चेहरों की मुस्कान है,
कवि कविताओं का खुला मैदान है।
कवि तो भगवान है.............

19 अगस्त 2012

2616 वाँ भगवान महावीर जन्म जन्म जयन्ती महोत्सव एवं प.पू आचार्य आर्जवसागरजी महाराज का 29 वाँ मुनि दीक्षा समारोह गुरु गरिमा महोत्सव सम्पन्न

परम पूज्य आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज काँच मंदिर, दमोह की धर्म प्रभावना के उपरान्त कई दिनों से निवेदित एवं प्रतिक्षारत सिविल वार्ड (भाईजी मन्दिर) लोगों के पुण्य उदय से गुरुवर का पदार्पण वहाँ पर हुआ। बाजे के साथ गुरुवर की मंगल अगवानी हुयी। वहाँ पर प्रतिदिन सम्यक् ध्यान शतक पर गुरुवर के प्रवचन हुये। इसी बीच सप्त दिवसीय महावीर जयन्ती कार्यक्रम की तैयारियाँ चल रही थी। दिनांक 3 अप्रैल से 9 अप्रैल तक का आयोजन श्री महावीर जन्मोत्सव समारोह समिति द्वारा रखा गया था। जिसमें 3 अप्रैल 2017 सोमवार को 8 बजे गुरुवर ससंघ सिविलवार्ड से जेलर के नम्र निवेदन पूर्वक जिला जेल पर गये। वहाँ पर मंचासीन होने के उपरान्त वहाँ पर उपस्थित अतिथिगण एवं कैदी लोगों ने गुरुवर के चरणों में श्रीफल भेंटकर आशीर्वाद प्राप्त किया। पश्चात् श्री राकेश पलंदी ने मुनिचर्या की महिमा के बारे सबको परिचय कराया। पश्चात् प.पू. आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के मंगल प्रवचन अहिंसा एवं शाकाहार पर हुये। जिसे सुनकर कैदी लोग बहुत हर्षित और भाव विभोर हुये और गुरुवर के द्वारा बताये गये नियमों का पालन करने हेतु संकल्पित हुये पश्चात् गुरुवर का ससंघ आगमन नन्हें मन्दिर पर हुआ। वहाँ पर स्थित विशाल धर्मशाला में 4 अप्रैल को दोपहर में सामाजिक संस्थाओं का सम्मेलन हुआ। जिसमें करीब 15-20 पाठशालाओं के सदस्यों व बालक-बालिकाओं द्वारा अपना-अपना सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये। जिसे देखकर जनता फूली नहीं समाई और पाठशाला का महत्त्व को लोगों ने जाना। यह कार्यक्रम दमोह नगर में पहली बार हुआ है। पश्चात् उन पाठशालाओं में से तीन पाठशालाओं को प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कार दिया गया। 6 अप्रैल को दोपहर में पारस पैलेस पर युवा विद्वान् का सम्मेलन हुआ जिसमें 20-25 विद्वानों ने अपने-अपने आलेख प्रस्तुत किये। यह कार्यक्रम आ. आर्जवसागरजी महाराज के आशीर्वाद से एवं पं.श्री सुरेश मरोरा इन्दौर के प्रयास तथा भागचन्द भागेन्दु दमोह के प्रतिनिधित्व में सम्पन्न हुआ। पश्चात् गुरुवर का भी मंगल प्रवचन हुआ। 7 अप्रैल को दोपहर में पारस पैलेस पर अहिंसा एवं विज्ञान संगोष्ठी की गयी जिसमें 30-40 डाक्टर्स, 40-50 वकील, एवं प्रशासनिक अधिकारी एवं प्रबुद्ध वर्ग पधारे थे। इसी दिन म.प्र. के प्रसिद्ध मंत्री श्री जयंत मलैया भी गुरु के दर्शनार्थ पधारे और पूरी संगोष्ठी में अपनी उपस्थिति दी तथा अपना वक्तव्य भी दिया। अन्त में गुरुवर के मंगल प्रवचन भी अति आकर्षक हुये। 8 अप्रैल को दोपहर में गुरुवर के ससंघ सान्निध्य में जैन अल्पसंख्यक योजना सेमीनार श्री अनिल जैन बड़कुल गुना वालों के वक्तव्य के साथ सम्पन्न हुआ। जिसमें उन्होंने प्रशासन द्वारा अल्पसंख्यक को दी जाने वाली सुविधाओं को बताया। अंत में आचार्यश्री ने षट्कर्मों की व्यवस्था एवं चार पुरुषार्थों पर प्रवचन दिये। प्रतिदिन आगन्तुक विद्वानों व अतिथियों को शॉल, श्रीफल एवं प्रतीक चिन्हों से सम्मानित भी किया गया। इसी दिन रात को अहिंसा वाहन रैली द्वारा पूरे नगर में भ.महावीर का संदेश दिया गया। और अन्तिम दिन 09

अप्रैल को सुबह 7 बजे से श्री जी का विमानोत्सव प्रारम्भ हुआ जिसमें सभी मन्दिरों की महिलायें, पाठशाला के बच्चे, दिव्यघोषों को लिए हुये युवा मण्डल, पुरुष वर्ग अपनी-अपनी झांकियों के साथ जुलूस में सम्मिलित हुये। यह विमानोत्सव सिटीनल से प्रारम्भ होकर नसियाँ मन्दिर रोड के विशाल पाण्डाल तक पहुँची। रथ में श्रीजी के साथ गुरुवर का ससंघ सान्निध्य ने चार चाँद लगा दिये। इतना बड़ा जुलूस दमोह नगर वासियों ने पहली बार देखा जिसमें कई प्रांतो से लोग शामिल हुए। पण्डाल में गुरुवर मंचासीन हुये। मंगलाचरण पूर्वक कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। गुरुवर के कर कमलों में 29 शास्त्र भेंट किये गये। इसी बीच श्री जयंत मलैया एवं श्रीमति सुधा मलैया ने गुरुवर को श्रीफल भेंटकर आशीर्वाद प्राप्त किया। पश्चात् आचार्यश्री के मार्मिक मंगल प्रवचन हुये। तदुपरान्त श्री जी का जिनाभिषेक एवं शान्तिधारा सम्पन्न हुई। अपार जनसमूह पाण्डाल में नहीं समाया, लोग पाण्डाल के बाहर खड़े रह करके पूरे कार्यक्रम देख रहे थे। इतनी महती प्रभावना के साथ गुरुवर के प्रवचन के पूर्व श्री बालचन्दजी जैन, पथरिया वालों ने गुरुवर से मुनि दीक्षा हेतु नम्र निवेदन किया। अप्रैल 8 तारीख रात को इनकी गोदभराई का कार्यक्रम हो ही चुका था और 9 अप्रैल को सुबह 5 बजे उन्होंने केशलोंच किया। जुलूस के साथ ही बग्गी में बिठाकर इनकी बिनोली भी निकली और भरी सभा में अपना भाव भी प्रकट कर दिया और सबसे क्षमा याचना की।

दोपहर में 29वें दीक्षा दिवस गुरु गरिमा महोत्सव एवं मुनि दीक्षा का विशाल कार्यक्रम जैन धर्मशाला के सभागार के सामने बने पाण्डाल में मंगलाचरण पूर्वक कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। बाहर से पधारे अतिथियों द्वारा चित्र अनावरण एवं दीप प्रज्ज्वलन का कार्यक्रम हुआ। पश्चात् सूरत से पधारे श्री हर्षित भाई एवं अरविन्द भाई ने गुरुवर का पादप्रक्षालन एवं शास्त्र भेंट का सौभाग्य प्राप्त किया। तत्पश्चात् आचार्यश्री आर्जवसागरजी की पूजन संगीतमय अलग-अलग मन्दिरों से सजाकर लाये गये द्रव्यों से भक्ति भाव पूर्वक की गयी। तदुपरान्त 29 आरतियों द्वारा मंगल आरती की गयी। पश्चात् आचार्यश्री ने मुनि दीक्षा हेतु क्रियायें प्रारम्भ की। मंत्रोच्चारण पूर्वक श्री बालचंद पथरिया के ऊपर मुनि दीक्षा के संस्कार किये गये। दीक्षार्थी ने सब वस्त्राभरण त्याग दिये। मुनि बनके कायोत्सर्ग में लीन हो गये। दमोह नगर की जैन धर्मशाला के विशाल पाण्डाल में इस मुनि दीक्षा को देखकर लोग बहुत आनन्दित हुये। गुरुवर की जय-जयकार लगाने लगे और उनका नाम प.पू. मुनिश्री महत्सागरजी महाराज रखा गया। गुरुवर के कर कमलों से पिच्छि प्राप्त की एवं कमण्डल पथरिया वाले कमलेश चौधरी द्वारा गुरुवर ने प्रदान किया। अन्त में गुरुवर के मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये। इस कार्यक्रम में पथरिया, जबेरा, सूरत, दिल्ली, सागर, भोपाल आदि अनेक जगह से लोगों ने आकर पुण्यार्जन किया। विशाल जनसमूह से कार्यक्रम स्थल बोना पड़ गया। इस प्रकार यह मुनिदीक्षा कार्यक्रम दमोह नगर में प्रथम बार सानन्द मंगलमय एक ऐतिहासिक कार्यक्रम के रूप में सम्पन्न हो गया।

28 तारीख को अक्षय तृतीय का कार्यक्रम नसियाँ मन्दिर दमोह के निर्माणधीन विशाल नये मन्दिर में आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्य में श्री भक्तामर महामण्डल विधान पूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ। इसी बीच आचार्यश्री के मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये तथा 1 मई से 14 मई तक ग्रीष्मकालीन सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर का आयोजन प्रारम्भ हुआ। जिसमें तत्त्वार्थसूत्र, छहढाला, द्रव्यसंग्रह, जीवन संस्कार एवं

भक्तामर स्तोत्र की कक्षायें चलीं। इसी बीच 10 मई को पूर्णिमा के दिन श्री शान्तिनाथ महामण्डल विधान भारी जनसमूह के बीच सम्पन्न हुआ। पश्चात् गुरुवर के मार्मिक प्रवचन सम्पन्न हुये। 15 मई को सम्यग्ज्ञान शिविर का समापन हुआ। जिसमें परीक्षा में उत्तीर्ण हुये लोगों को पुरस्कार वितरण किये गये।

दिनांक 30 मई को सिविलवार्ड (भाईजी मन्दिर) में आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्य में श्रुतपंचमी पर्व मनाया गया। जिसमें चन्दनबाला कन्या मण्डल नसियाँ जी द्वारा मंगलाचरण किया गया। पश्चात् अनेक लोगों ने गुरुवर के कर कमलों में शास्त्र भेंट किये। तदुपरान्त आचार्यश्री का मंगल प्रवचन हुआ जिसमें गुरुवर ने श्रुतपंचमी पर्व का महत्त्व कथानक में कहा कि कैसे धरसेनाचार्य ने पुष्पदन्त व भूतबली आचार्य को ज्ञान दिया और उन्होंने कैसे षट्खण्डागम की रचना की इत्यादिक। इसी श्रुतपंचमी पर्व पर सकल दिगम्बर जैन समाज सिविल वार्ड दमोह के द्वारा भाव विभोर होकर आचार्य श्री 108 आर्जवसागरजी महाराज ससंघ के चरणों में श्रीफल अर्पित कर वर्षायोग भाईजी मन्दिर सिविल वार्ड दमोह में सम्पन्न करने हेतु नम्र निवेदन किया गया।

5 जून 2017 को मध्याह्न में डेरापहाड़ी, छतरपुर की कमेटी से आये लोगों ने सिविल वार्ड दमोह आकर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज से ससंघ छतरपुर पधार कर चातुर्मास हेतु नम्र निवेदन कर श्रीफल अर्पित किये और उसी दिन गुरुवर का ससंघ जून 5 तारीख को सिविल वार्ड दमोह से अभाना की ओर विहार हो गया। मारूताल होते हुए दूसरे दिन सुबह अभाना में मंगल प्रवेश हुआ। तीनों मन्दिरों का दर्शन किया। पश्चात् आहारचर्या सम्पन्न हुई। दोपहर में छोटे मन्दिर के प्रवचन हाल में गुरुवर का मंगल प्रवचन सम्पन्न हुआ। उसके पूर्व सभी कमेटी के लोगों ने व समाज द्वारा चातुर्मास के लिए श्रीफल भेंट किये। फिर भी गुरुवर का प्रवचन के उपरान्त नोहटा के लिए विहार हो गया। शाम को अतिशय क्षेत्र आदीश्वर गिरि पहुँचे। वहाँ पर प्राचीन प्रतिमाओं का दर्शन कर वहीं पर ठहरे। प्रात:काल नोहटा नगर में स्थित मन्दिरों का दर्शन किया और गुरुवर का प्रवचन भी सम्पन्न हुआ। सबने श्रीफल भेंटकर ठहरने हेतु निवेदन किया तथा दोपहर में जबेरा की कमेटी आयी और विनम्र भाव पूर्वक नगर पधारने हेतु श्रीफल समर्पित कर निवेदन किया। पश्चात् 8 तारीख को जबेरा में, जो गुरुवर के पूर्व अवस्था का ननिहाल था, उस गाँव में बैंड बाजों एवं अपार जन समूह व जय-जयकारों की ध्वनि के साथ 28 साल के बाद नगर आगमन हुआ। जिन मन्दिर दर्शन के बाद गुरुवर का मंगल प्रवचन हुआ जिसमें श्रीफल (नारियल) के उदाहरण में मोक्षमार्ग की महिमा बतलायी। पश्चात् सभी ने चातुर्मास हेतु निवेदन किया। यहाँ पर चार दिन का प्रवास रहा। प्रतिदिन प्रवचन आदि कार्यक्रम हुये। पश्चात् 11 तारीख को सिंग्रामपुर की ओर विहार हुआ। दूसरे दिन सिंग्रामपुर में आहारचर्या सम्पन्न हुयी। तदुपरान्त गुबरा होते हुए कटंगी की ओर विहार हो गया। 13 तारीख को सुबह कटंगी नगर में बाजों के साथ मंगल प्रवेश हुआ। विशाल नये मन्दिर के दर्शन उपरान्त वहीं पर मंगल प्रवचन भी सम्पन्न हुये। सभी ने चातुर्मास हेतु श्रीफल भेंटकर नम्र निवेदन किया। 5 दिन के प्रवास के बाद गुरुवर का मंगल विहार मुरई, बोरिया होते हुए महानगर जबलपुर में मंगल प्रवेश हुआ। मदर थेरेसा में एक दिन का प्रवास रहा। पश्चात् ग्रीन सिटी होते हुए लार्डगंज मन्दिर आये। विशाल जिनमन्दिर स्थित

प्रतिमाओं का दर्शन किया। गुरुवर ससंघ 23 तारीख को प्रात:काल हनुमान ताल, जूड़ी तलैया आदि 10 मन्दिरों का दर्शनार्थ पधारे और 24 तारीख को अग्रवाल कॉलोनी वालों के द्वारा किये गये नम्र निवेदन से वहाँ पर मंगल आगमन हुआ। तीन दिनों के प्रवास में प्रतिदिन मंगल प्रवचन लाभ हुआ। दोपहर में गुरुकुल से ब्र.जिनेश भैय्या आदि एवं ब्राह्मी श्राविका आश्रम से मणिबाईजी आदि ने आकर मढ़ियाजी पधारने हेतु निवेदन किया। पश्चात् गढ़ा(पुरवा) वालों ने आकर अपनी कॉलोनी में पधारकर वर्षायोग सम्पन्न करने हेतु निवेदन किया। पश्चात् 26 तारीख शाम को गढ़ा (पुरवा) में बैंड-बाजे एवं समाज के जय-जयकारों के साथ मंगल प्रवेश हुआ। 27 तारीख को गुरुवर का मंगल प्रवचन धर्म की महिमा पर हुआ। दोपहर में मढ़िया जी की कमेटी के लोगों ने आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के 50 वाँ दीक्षा दिवस महोत्सव गुरुवर के सामने मनाने हेतु नम्र निवेदन किया। 28 तारीख को प्रात:काल बैंड-बाजों के साथ गुरुवर ने मढ़ियाजी में मंगल प्रवेश किया। दर्शन के पश्चात् शान्तिधारा गुरुवर के मुखारबिंद से हुयी। पश्चात् आचार्यश्री की संगीतमय पूजन एवं आचार्य छत्तीसी विधान किया गया। इसी बीच दीप प्रज्ज्वलन एवं मंगलाचरण के उपरान्त गुरुवर का मंगल प्रवचन हुआ। पश्चात् गढ़ा(पुरवा) वालों की समाज एवं कमेटी के लोगों ने 2017 का भव्य चातुर्मास हेतु श्रीफल भेंट किया। बीच में कटंगी, लखनादोन और अग्रवाल कॉलोनी के भक्तगणों का भी चातुर्मास निवेदन हेतु आगमन जारी रहा और गुरुवर का गुरु परम्परा से 'देखो' शब्द सभी लोगों में आशा बंधाये हुये था, लेकिन पुरवा जबलपुर वालों का पुण्य कुछ अधिक ही नजर आ रहा था। और सभी ने सिद्धचक्र मंडल विधान हेतु नम्र निवेदन भी प्रस्तुत किया।

विद्यावाणी

1. जिन और जन में इतना अन्तर है कि एक वैभव के ऊपर बैठा है और एक के ऊपर वैभव बैठा है।
2. श्रद्धा जब गहराती है तब वहीं समर्पण बन जाती है।
3. मांगने से नहीं किन्तु अधिकार श्रद्धा से मिलते हैं।
4. शिक्षा वही श्रेष्ठ है, जो जन्म-मरण का क्षय करती है।
5. अपने आपको जानो, अपने को पहिचानो, अपनी सुरक्षा करो क्योंकि अपने में ही सब कुछ है।
6. शरीर के प्रति वैराग्य और जगत के प्रति संवेग ये दोनों ही बातें आत्म कल्याण के लिये अनिवार्य है।
7. अपने उपयोग का उपयोग पर की चिंता में ना करे।
8. पंच परमेष्ठी की भक्ति एवं ध्यान से विशुद्धि बढ़ेगी, संक्लेश घटेगा, वात्सल्य बढ़ेगा।
9. भक्ति गंगा की लहर हृदय के भीतर से प्रवाहित होना चाहिये और वहाँ पहुँचना चाहिये जहाँ निस्सीमता हो।
10. जो व्यक्ति वाणी को नियन्त्रित नहीं कर सकता वह साधना नहीं कर सकता।
11. वे महान हैं जो मुख से एक शब्द निकालने में आगे पीछे विचार करते हैं।
12. साधक बनो प्रचारक नहीं।

भाव विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

नियमावली :

1. उत्तर लिखने वाले या उसके पारिवारिक सदस्य की भाव विज्ञान पत्रिका संबंधी आजीवन सदस्यता होनी अनिवार्य है। एक परिवार से एक ही उत्तर पुस्तिका स्वीकार्य होगी । अन्य नहीं।
2. प्रश्न पत्र के पेपर पर ही उत्तर लिखकर भेजें । फोटो कॉपी मान्य नहीं होगी।
3. उत्तर पुस्तिका पर अंक देने का भाव उत्तर पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता, लिखावट एवं उम्र पर निर्भर करेगा। अल्प उम्र वाले प्रतियोगी को प्रमुखता दी जावेगी।
4. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
5. उत्तर पुस्तिका की प्रतियोगी को एक फोटोकॉपी करवा लेना चाहिये क्योंकि मुख्य उत्तर पुस्तिका में कोई गलती न हो एवं अगली भाव विज्ञान पत्रिका में आने वाले उत्तरों का प्रतियोगी मिलान कर सके।
6. पत्रिका पहुँचने के पन्द्रह दिनों के भीतर उत्तर अवश्य प्रेषित करें। पत्रिका प्रकाशित होने के एक माह के बाद प्राप्त उत्तर पुस्तिकाएँ प्रतियोगिता हेतु मान्य नहीं की जावेगी।
7. पुरस्कार की राशि मनीआर्डर या बैंक आदि से भेजी जावेगी। प्रतियोगी प्राप्त मूल्य का उपयोग अपने तीर्थ वंदना, पूजा द्रव्य दान, आहार दान, औषधदान, उपकरण दान, पाठशाला की यूनिफार्म आदि धर्म कार्य के द्रव्य में सम्मिलित कर सकते हैं।
8. अगली भाव विज्ञान पत्रिका में सभी श्रेणियों के पुरस्कार विजेताओं के नाम प्रकाशित किये जावेंगे।
9. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित की जानी चाहिए।
   डॉ. प्रोफेसर सुधीर जैन, 85, डी.के. कॉटेज, दानापानी रेस्टोरेंट के पास, ई-8 एक्सटेंशन, भोपाल (म.प्र.)

* **उपरोक्त प्रतियोगिता के बारे में हमारा उद्देश्य है कि बाल-युवा पीढ़ी भी स्वाध्याय के क्षेत्र में आगे बढ़े एवं घर-घर में चले धर्म संस्कार की पाठशाला।**

प्रथम पुरस्कार : 108 योग्य संख्यक मूल्य, द्वितीय पुरस्कार: 72 योग्य संख्यक मूल्य

तृतीय पुरस्कार : 57 योग्य संख्यक मूल्य

पुरस्कारों के पुण्यार्जक श्री विनोद कुमार जैन, 591, कंचन विला, कृष्ण विहार, वी.के. कोल नगर, (अजमेर राजस्थान)

उत्तीर्ण प्रतियोगी परिचय

मार्च 2017

प्रथम श्रेणी

श्रीमती विमला केसरीचंद जैन
शासकीय नर्सरी, नूतन नगर,
खरगोन (म.प्र.)

द्वितीय श्रेणी

श्रीमती मिथिलेश वीरेन्द्र जैन
F-42, संजय काम्प्लेक्स, जयेन्द्र गंज
लश्कर, ग्वालियर

तृतीय श्रेणी

श्री सुमतप्रकाश जैन
52/140, वीटी रोड, मानसरोवर
जयपुर (राजस्थान)

उत्तर पुस्तिका मार्च 2017

1. ऐरादेवी 2. एक लाख वर्ष 3. 40 धनुष
4. $4\frac{1}{2}$ योजन 5. ना 6. हाँ
7. हाँ 8. हाँ 9. पाँचवें
10. सुदर्शन 11. नव
12. भ.शान्तिनाथ भरत क्षेत्र के विजयार्ध पर्वत से विभाजित एक आर्यखण्ड पाँच म्लेच्छखण्ड के अधिपति थे।
13. सर्वार्थसिद्धि 14. सुमित्र
15. मन्दिरपुर 16. भरणी
17. सही 18. सही 19. सही
20. सही

भाव विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

समय : 15 दिन, अंक : 100

- ❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं।
- ❖ इन प्रश्नों में से एक प्रश्न का उत्तर दो लाइनों में वाक्य सहित लिखना अनिवार्य है।
- ❖ उत्तर राष्ट्रभाषा हिन्दी में लिखें। लिखकर काटे या मिटाए जाने पर अंक नहीं दिए जाएँगे।

सही उत्तर पर (✓) सही का निशान लगावें-

प्र.1. भ.कुन्थुनाथ की मोक्ष कल्याणक तिथि क्या थी?

ज्येष्ठ कृष्णा 14 ( )　　ज्येष्ठ शुक्ला 4 ( )　　वैशाख शुक्ला 1 ( )

प्र.2. भ. कुन्थुनाथ का जन्म कहाँ पर हुआ था?

हस्तिनापुर ( )　　मिथिलापुरी ( )　　रत्नपुरी ( )

प्र.3. भ. कुन्थुनाथ के वैराग्य का कारण क्या था?

मेघ पटल नाश ( )　　जातिस्मरण ( )　　उल्कापात ( )

प्र.4. भ. कुन्थुनाथ के समवसरण में प्रमुख गणधर कौन थे?

श्रीजय ( )　　कुंभजी ( )　　स्वयंभू ( )

हाँ या ना में उत्तर दीजिये-

प्र.5. भ. कुन्थुनाथ ने राजा सिंहरथ के पर्याय में तीर्थंकर प्रकृति का संचय किया था। ( )

प्र.6. भ.कुन्थुनाथ अच्युत स्वर्ग से अवतरित हुये थे। ( )

प्र.7. भ. कुन्थुनाथ कौरववंशी थे। ( )

प्र.8. भ. कुन्थुनाथ के पिताश्री सूरसेन कुरुजांगल देश के राजा थे ( )

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

प्र.9. भ.कुन्थुनाथ .... तिथि के दिन चक्रवर्ती की लक्ष्मी प्राप्त की थी।

(गर्भ, जन्म, दीक्षा)

प्र.10. भ. कुन्थुनाथ .... वन में दीक्षा धारण की थी।

(सहेतुक, मन्दिरपुर, हस्तिनापुर)

प्र.11. भ.कुन्थुनाथ के समवसरण में प्रमुख आर्यिका .... थी।

(सुव्रता, सर्वश्री, भाविता)

दो पंक्तियों में उत्तर दें:-

प्र.12. भ.कुन्थुनाथ को कौन-से काल में किस क्षेत्र से और कौन-सी टोंक (कूट) से मोक्ष गये?

....

....

....

सही जोड़ी मिलायें:-

प्र.13. भ. कुन्थुनाथ कुमार काल	-	60,000
प्र.14. भ. कुन्थुनाथ के तपश्चरण का काल	-	1,000
प्र.15. भ. कुन्थुनाथ के समवसरण में कुल मुनियों की संख्या	-	23,750
प्र.16. भ. कुन्थुनाथ के साथ दीक्षा लिये राजाओं की संख्या	-	16,000

सही (✓) या गलत (×) का चिन्ह बनाइये:-

प्र.17. भ.कुन्थुनाथ ने वेला का नियम लेकर दीक्षा धारण की थी। ( )

प्र.18. भ. कुन्थुनाथ हुण्डावसर्पिणी काल में मोक्ष गये। ( )

प्र.19. भ. कुन्थुनाथ को जम्बुवृक्ष के नीचे केवलज्ञान हुआ। ( )

प्र.20. भ. कुन्थुनाथ को चैत्रशुक्ला तृतीया को केवलज्ञान हुआ। ( )

आधार

1. उत्तर पुराण, 2. जैनागम संस्कार

प्रतियोगी-परिचय

भाव विज्ञान सदस्यता की रसीद क्रमांक :

नाम .... उम्र ....

पिता/माता/पति का नाम ....

नगर या गाँव का नाम ....

पता..

....

मोबाईल/फोन नं. ....

सदस्यों को भाव विज्ञान प्रेषित करते समय लिफाफे के पते पर रसीद क्रमांक का लेख भी किया जाता है।

भाव विज्ञान परिवार

***** शिरोमणी संरक्षक *****

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर, ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड)

**** परम संरक्षक ****

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी

*** पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ***

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी** : सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

** पुण्यार्जक संरक्षक **

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली

* सम्मानीय संरक्षक *

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री जैन बी.एल. पचन्ना, बैंग्लुरू ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर** : श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन, ● **सूरत** : श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह।

* संरक्षक *

● श्री जैन विजय अजमेरा, रीवा ● श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी, छतरपुर ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली** : श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर, हस्तिनापुर (मेरठ) ● श्री संजय जैन, गुड़गांव ● श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन, गाजियाबाद ● श्री जैन कल्याणमल झांझरी, कलकत्ता ● **भोपाल**: श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, श्री प्रेमचंद जैन ● श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंज मण्डी, कोटा ● श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी, गुवाहाटी ● श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया, पांडीचेरी ● श्रीमति विमला मनोहर जैन, सूरत ● **जयपुर** : श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर** : श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर** : श्री सचिन जैन, स्मृति नगर ● **पथरिया (दमोह)** : श्री मुकेशकुमार जैन, जैन साईकल मार्ट

* विशेष सदस्य *

● **दमोह** : श्री मनोज जैन दाल मिल, श्री महेश जैन दिगम्बर, श्री संजीव जैन शाकाहारी, श्री जैन तरुण सर्राफ, श्री जैन पदम लहरी ● **अजमेर** : श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत** : श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी ● **भोपाल**: श्री राजकुमार जैन

* नवागत सदस्य *

• **भोपाल** : श्री सुरेश जैन, पंजाब बैंक

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री ....

जिला .... प्रदेश ....से

भाव विज्ञान पत्रिका पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा वर्तमान व्यवहारिक का पता :- ....

....

जिला .... प्रदेश ....

पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....

फोन नम्बर .... मोबाईल ....

ई-मेल ....है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कृपया यहाँ से निकालें

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

आशीर्वाद एवं प्रेरणा : संत शिरोमणी आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज

पत्रिका की विशेषताएं एवं उद्देश्य :

- विशिष्ट साधक आचार्यों या साधुओं के और डाक्ट्रेट व विशिष्ट विद्वानों के शिक्षाप्रद आलेखों, प्रवचनों एवं समीक्षाओं का प्रस्तुतिकरण
- सत् साहित्य समीक्षा।
- अहिंसात्मक जीवन शैली।
- व्यसन मुक्ति अभियान।
- हिंसक पदार्थों व हिंसक सौंदर्य प्रसाधन का निरसन।
- नई पीढ़ी के लिए वैज्ञानिक शैली में जैन दर्शन का प्रस्तुतिकरण।
- रूढ़िवाद, मिथ्यात्व व शिथिलाचार रहित अनेकान्त, स्याद्वाद और सापेक्षवाद शैली में जैनत्व का प्रस्तुतिकरण।
- धार्मिक प्रश्नोत्तरी व काव्य संग्रह की प्रस्तुति।
- धार्मिक पर्व आयोजन व मुनि संघ समाचार प्रस्तुति इत्यादि।
- प्रतिभा सम्पन्न प्रतियोगियों के लिए सम्मानित करना।

नोट : "भाव विज्ञान" भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

"भाव विज्ञान" एम-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।

सम्पर्क : डॉ. अजित कुमार जैन - 09425601161, डॉ. सुधीर जैन - 09425011357

कृपया पत्रिका को पढ़कर अपने परिजन को दें या किसी दि. जैन मंदिर, वाचनालय अथवा किसी दि. जैन धर्म क्षेत्र पर विराजमान करें।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी के दीक्षा दिवस पर मंगलाचरण करती हुई आर्यिकाश्री 105 प्रतिभामती माता जी।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी के दीक्षा दिवस पर पाद प्रक्षालन का सौभाग्य लेते हुये हर्षदभाई, अरविन्दभाई, सूरत।

दीक्षार्थी श्री बालचंदजी की गोद भराई में भाग लेते हुये भक्तगण।

महावीर जयंती के पावन अवसर पर प्रातः जुलूस के उपरांत नसियाजी दमोह के सामने जनसभा में दीक्षा का निवेदन करते हुये दीक्षार्थी।

ब्रह्मचारी श्री बालचंदजी के ऊपर मुनि दीक्षा के संस्कार करते हुये प.पू. आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

वस्त्र विमोचन उपरांत दीक्षार्थी के षोडस संस्कार करते हुये प.पू. आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

दीक्षार्थी ब्र. बालचंदजी मुनि दीक्षा में वस्त्रों के विमोचन उपरांत।

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

प.पू. आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के सान्निध्य में 1 अप्रैल 17 को महावीर जयन्ती के उपलक्ष्य में अहिंसा का संदेश देते हुये पाठशाला के बच्चे।

दमोह नगर में महावीर जयंती की शोभा यात्रा के उपरांत विशाल पंडाल में गुरुवर का आशीर्वाद प्राप्त करते हुये भक्तगण।

दमोह में महावीर जयन्ती के अवसर पर श्री लोकेश जैन, नई दिल्ली सपरिवार सम्मानित होते हुये।

भाव विज्ञान के नवीन अंक का विमोचन करते हुये हर्षदभाई-सूरत, संतोष सिंघई-दमोह, श्रीमती सुधा मलैया आदि।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ नंदीश्वर जिनालय परिसर, मढ़ियाजी, जबलपुर में।

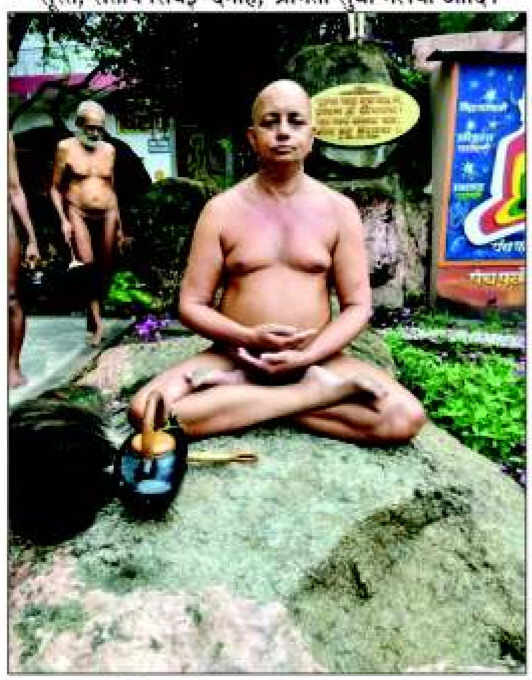

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज पिसनहारी की मढ़ियाजी में ध्यान मुद्रा में।

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 0755-4902433, 9425601161